अहिंसा, आगम और विज्ञान से आलोकित श्रेष्ठतम पत्रिका

भाव विज्ञान

BHAV VIGYAN

प्रवचन के पूर्व मंगलाचरण करते हुए आचार्यश्री 108 आर्जवसागरजी महाराज

वीर निर्वाण संवत् - 2546

अश्विन शुक्ल, वि.सं. 2077, सितम्बर 2020

अंक : तिरेपन

वर्ष : चौदह

2020 विहार यात्रा के समय आचार्यश्री आर्जवसागरजी ससंघ।

जिनालय दर्शनार्थ जाते हुए आर्जवसागरजी ससंघ।

ललितपुर में मंचासीन आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज 2020

वर्षायोग 2020 ललितपुर के प्रतिभा सम्पन्न U.P.S.C. सिलेक्टेड प्रखर जैन का सम्मान करते हुए समाज के वरिष्ठ पदाधिकारी।

U.P.S.C में सिलेक्टेड प्रखर जैन ललितपुर आ.आर्जवसागरजी के लिए शास्त्र दान करते हुए।

आ.आर्जवसागरजी के लिए शास्त्र भेंट करते हुए आर्जव प्रभावना संघ के युवागण ललितपुर।

मंगलाचरण प्रतियोगिता में पुरुस्कार प्राप्त करते हुए प्रतियोगीगण ललितपुर वर्षायोग 2020

दीक्षा दिवस पर आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज की प्रदक्षिणा करते हुए संघस्थ मुनि।

रजिस्ट्रेशन क्रं. MPHIN/2007/27127

त्रैमासिक

भाव विज्ञान

(BHAV VIGYAN)

वर्ष-चौदह
अंक - तिरेपन

आशीर्वाद व प्रेरणा

संत शिरोमणि आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज से दीक्षित

आचार्यश्री 108 आर्जवसागर जी महाराज ।

• परामर्शदाता •

प्राचार्य डॉ. शीतलचंद जैन, जयपुर
मो. 9414783707, 8505070927

। सम्पादक ।

डॉ. अजित कुमार जैन,
MIG-8/4, गीतांजली काम्प्लैक्स,
कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल-462003
मो. : 7222963457, व्हाट्सएपः 9425601161
email : bhav.vigyan@gmail.com

• प्रबंध सम्पादक •

डॉ. सुधीर जैन, प्राध्यापक
85, डी.के. काटेज, ई-8 एक्सटेंशन, अरेरा कालोनी,
भोपाल मो. 9425011357

• सम्पादक मंडल •

पं. जय कुमार 'निशांत', टीकमगढ़ (म.प्र.)
डॉ. संजय जैन (एडवोकेट), इंदौर (म.प्र.)
डॉ. श्रीमती अल्पना जैन (मोदी), ग्वालियर (म.प्र.)
इंजी. महेन्द्र कुमार जैन, भोपाल (म.प्र.)
श्री सुनील वेजीटेरियन, दमोह (म.प्र.)

• कविता संकलन •

पं. लालचंद जैन 'राकेश', भोपाल

• प्रकाशक •

श्रीमती सुषमा जैन धर्मपत्नी डॉ. अजित जैन
MIG-8/4, गीतांजली काम्प्लैक्स, कोटरा
सुल्तानाबाद, भोपाल-462003 मो.: 9479978084
email : bhav.vigyan@yahoo.co.in

• आजीवन सदस्यता शुल्क •

शिरोमणी संरक्षक	:	50,000 से अधिक
पुण्यार्जक विशेषांक संरक्षक	:	24,500
परम संरक्षक	:	21,000
पुण्यार्जक संरक्षक	:	18,000
सम्मानीय संरक्षक	:	11,000
संरक्षक	:	5,100
विशेष सदस्य	:	3,100
आजीवन (स्थायी)सदस्यता	:	1,500

कृपया सदस्यता शुल्क प्रकाशक के एवं रचनाएँ प्रबंध सम्पादक के पते पर भेजें।

पल्लव दर्शिका

विषय वस्तु एवं लेखक — **पृष्ठ**

1. तीर्थोदय काव्य का ''सामाजिक अवदान'' – डॉ. सुधीर जैन, डिप्टी कमिश्नर, भोपाल — 2
2. घड़े की शिक्षा – आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज — 7
3. आगम-अनुयोग [प्रश्नोत्तर-प्रदीप] – आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज — 10
4. सम्यग्ज्ञान-भूषण व सिद्धांत-भूषण पद हेतु त्रैमासिक धर्म प्रश्न-पत्र एवं नियमावली – — 26
5. प्रागैतिहासिक-प्राग्वैदिक जैन धर्म और उसके सिद्धांत – श्री नाथूलालजी जैन शास्त्री — 28
6. आर्जव जीवन गान – श्री महेन्द्रकुमार जैन 'शाश्वत' — 36
7. समाचार — 40

लेखक एवं विचारों से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है।
भाव विज्ञान से संबंधित समस्त निर्णयों/न्यायों के लिए न्याय क्षेत्र भोपाल ही मान्य होगा।

तीर्थोदय काव्य का ''सामाजिक अवदान''

-डॉ. सुधीर जैन, डिप्टी कमिश्नर, भोपाल

'मूकमाटी' रचयिता संत शिरोमणि आचार्य विद्यासागरजी महाराज ने कहा है कि ''साहित्य वही होता है जिसमें समाज का हित निहित हो।'' ऐसी रचना जिसमें हित न हो केवल सार शून्य शब्द झुण्ड ही होता है साहित्य कदापि नहीं। अपने गुरुदेव की उसी अक्षुण्ण परम्परा के संवाहक बने हैं पूज्य आचार्य आर्जवसागरजी महाराज और माध्यम बनी है 'तीर्थोदय' कृति।

'तीर्थोदय' जैसे कि नाम से ही ध्वनित होता है; संसार से तिरने का तीर्थंकर बनने का काव्य है। तीर्थंकर प्रकृति के उदय का हेतु है यह काव्य। आत्मा को परमात्मा बनाने का सेतु है यह काव्य। दुखों से आंतकित आत्माओं को सुखों की छांव दिलाने का कारण है यह तीर्थोदय काव्य। अपने पथ से भटके जगत् को, समाज को संयम की राह बताने का बीड़ा उठाता है यह काव्य- यही है इसकी आत्मा, यही है इसकी भावना, यही है इसका सामाजिक आवदान, सच पूँछो तो 'वरदान'।

स्वयं कृतिकार भी यही कहता है-

''सोलहकारण तीर्थ-भावना, भाऊँ कर्म नशाने को।
यह तीर्थोदय-काव्य लिखूँ मैं, भव-सुख तज, शिव पाने को॥''

जैसे कि इतिहास में आचार्य परंपरा, कुल परंपरा देखने को मिलती है वैसे ही महाकवि परंपरा भी देखने को मिले तो आश्चर्य नहीं होना चाहिए और वो परंपरा हो सकती है-

महाकवि ज्ञानसागर- महाकवि विद्यासागर और भविष्य के महाकवि आर्जवसागर

गुरु की गुरुता का भला इससे बड़ा प्रमाण क्या हो सकता है कि अपने शिष्य को अपने समान योग्य बना ले, आचार्य विद्यासागर महाराज इसमें सिद्धहस्त हैं।

जैसी विशद्ता, गहनता व तात्त्विक सूक्ष्मता आचार्य उमास्वामी कृत तत्त्वार्थ सूत्र में दिखती है वैसी ही विशिष्टता, सरलता व प्रवाह तीर्थोदय-काव्य में भी दृष्टव्य होता है। इसमें चारों अनुयोगों का निचोड़ मिलता है। यह श्रावक व साधु समाज के लिए अत्यंत कार्यकारी है।

तीर्थोदय काव्य के माध्यम से आचार्य आर्जवसागरजी ने स्वकीय अज्ञानता से भटके भौतिकतावादी समाज के मनुष्य को मार्गदर्शन देकर ज्ञानचक्षु खोलने का उपक्रम किया है। पंचमकाल में कतिपय शिथिलाचारी साधुओं के पथ भ्रष्ट शिष्यों का आचरण निंदनीय बताते हुए वे लिखते हैं- सचेत करते हैं-

''नाम, ख्याति, पूजा, धन लोभी, सदा ढूँढते कुगुरु वे।
कारण जैसे में तैसा हो, प्रसन्न रहें नित कुगुरु वो''
मिथ्या गुरु की संगति से जो, कभी न समकित गहता है।
आगम-पथ से चले न इक दिन, मुनि-निंदा भी करता है॥

आगे वे ऊपरी आकर्षणों में समकित न खोने की चेतावनी देते कहते हैं-

''रहे कुलिंगी शुभ्र-वर्ण वह, अथवा दिखे कृष्ण व लाल।
चमत्कार भी सभी दिखावे, व धन से हो माला-माल॥
किसी तरह के प्रलोभनों में, मीठी-मीठी बातों में।
ना भविजन तुम समकित खोना, जग-स्वप्न की रातों में॥''

पुरुषार्थ के बिना जीवन नहीं चलता, यही उद्घोष मूकमाटी में आचार्यश्री विद्यासागर कहते हैं-

''बाहुबल मिला है तुम्हें
करो पुरुषार्थ
अन्यथा नवनीत का गोला भी
पचेगा नहीं, प्रत्युत खतरा है जीवन को ''

इसी सुर में सुर मिलाते व परिश्रम का संदेश देते हुए आचार्यश्री आर्जवसागरजी लिखते हैं-

''है जैनी भवि! शक्ति मिली है चंद दिन में कर लो काम।
व्यर्थ निकम्मे बने धर्म में, मिले त्याग से मुक्ति धाम।
पूर्ण रूप पुरुषार्थी बन तुम, अनायतन या मिथ्यातम
दूर करना समंतभद्र-सम, फिर भजना भवि अध्यातम।''

जैसे संगति, वैसी सम्मति, वैसा जीवन राग से राग, आग से आग, त्याग से त्याग-

''अगर भिखारी से कुछ मांगे, वहाँ भिखारीपन मिलता।
रहती जैसी जहाँ है वस्तु, वैसा ही जीवन ढलता॥
प्रभु-गुण-कीर्तन करता धर्मी, प्रभु-सम बनता सुखी सदा।
सरागता की जहाँ भक्ति हो, भव में भटके दुखी सदा॥''

संसार में पापी से घृणा की जाकर पापी को पतित से पावन बनने का अवसर नहीं दिया जाता, इससे पतित प्रायश्चित कर अपना जीवन सुधार नहीं कर पाता। इसके उलट आचार्य आर्जवसागरजी का कहना है कि पाप से घृणा करो पापी से नहीं, क्योंकि वह पापी किसी भी क्षण अपने आप को बदलकर पापों से विरत होकर पूज्य बन सकता है। इतिहास ऐसे उदाहरणों से भरा पड़ा है जब अंजन चोर निरंजन होकर मोक्ष पहुँच जाता है, दंभी राजा श्रेणिक प्रायश्चित् कर तीर्थंकर प्रकृति का बंध कर लेता है, विश्व विजय में लगा रहा सम्राट सिकंदर अंतिम समय में सर्वपरिग्रहों में सुख की आशा को छोड़ देता है आदि। वे लिखते हैं-

सदा पाप से घृणा करो तुम, पापी से नहीं घृणा करो।
पापी इक दिन पाप तजे फिर, पूजित बनता यहाँ अहो॥

खड्ग की धार पर चलने के समान सन्मार्ग पर चलना भी अत्यधिक दुरूह है। वीतरागता का मार्ग भी ऐसा सही दुर्लभ है जिस पर चलने का प्रयास करते समय कतिपय जीव स्खलित हो जाते हैं किन्तु जब उन्हें इसका बोध होता है तो वे फिर से प्रायश्चित लेकर धर्मपथ पर आरूढ़ होना चाहते हैं अथवा हो जाते हैं। किन्तु कई बार सहधर्मी जन अपने साधर्मी की अज्ञानता या प्रमादवश हुई त्रुटियों को सार्वजनिक रूप से बताकर धर्मी

को कलंकित कर धर्म को भी क्षति पहुँचाते हैं। पर वास्तव में होना तो यह चाहिए किय यदि हम किसी धर्मी साधक से कोई शिथिलता देखते हैं तो उसे एकांत में निवेदन कर बताकर अथवा उसके गुरु को अवगत कराकर उसे पुनः अपने धर्म मार्ग से स्थितिकृत करने का प्रयास करे ताकि न धर्मीजन कलंकित हो न ही धर्म। क्योंकि कहा भी गया है–

''धर्मी के बिन धर्म रहे क्या ? अतः दोष उपचार करो।
अपने व्रत, पद की रक्षा-सह, सदा सभी उपकार करो॥''

भगवान महावीर ने अहिंसा धर्म को ध्वजा फहराते हुए समूचे विश्व को अहिंसा व शांति का शाश्वत संदेश दिया। गांधी जी ने भी उसी अहिंसा के बल पर अंग्रेजी राज को सदैव के लिए भारत भूमि से उखाड़ा फेंका और समूचे आधुनिक विश्व को अहिंसा के अमोघ अस्त्र की ताकत से अभिभूत कर दिया। जैन धर्म के महान सूत्र'' अहिंसा परमो धर्म'' को विश्व कल्याण का सूत्र बनाने की कामना कर आचार्य आर्जवसागरजी तीर्थोदय काव्य में लिखते हैं–

''ध्वजा अहिंसा की फहराएँ, सब जग में शुभकारी है।
दुःख दरिद्र सब संकट को जो, दूर करे अघहारी है॥''

चौरासी लाख योनियों में मनुष्य जन्म की महत्ता भला कौन नहीं मानता फिर भी प्राणी विषय-वासना और अर्थहीन कार्यों में पूरा जीवन नष्ट कर देते हैं। यदि इसी जीव को संयम के साथ बिताएं तो मोक्षमार्ग या परम सुख की प्राप्ति अवश्यंभावी है। यदि गृहस्थ जीवन जीते हुए भी छोटे-छोटे नियम संयम धारण किए जाएं तो भी परंपरा से परम सुख की प्राप्ति सुनिश्चित है। यही बात आचार्य आर्जवसागर जी ने कही है। वे लिखते हैं कि यह मनुष्य जन्म उतना ही दुर्लभ है जितना समुद्र की गहराईयों में खोया हुआ मणि अर्थात् इसका फिर से मिलना अत्यंत दुर्लभ है–

''अगर मनुज-भव छूट जाए फिर, कब मिलने वाला समझो ?
गिरा सुमणि जब सागर में फिर, कब मिलने वाला समझो ?''

संसार आज अहंकार, संकुचित सोच व व्यक्तिवादी रवैये के कारण आपस में झगड़ रहा है। मित्रता, सद्भाव, परस्पर प्रेम, सहयोग व विरोधी विचारों को भी सुनने व विचार कर निर्णय लेने का धैर्य अब दिखाई नहीं देता। यही स्थिति अशांति व संघर्ष को पैदा करती है। इस संघर्ष को टालने व सहयोग को पालने हेतु आचार्यश्री विद्यासागर जी महाराज मूकमाटी में अनेकांत की बात करते हैं वे 'ही' को एकांतवाद जबकि 'भी' को अनेकांतवाद का प्रतीक बताते हैं। इसी प्रकार तीर्थोदय काव्य सर्जक आचार्य आर्जवसागरजी भी लिखते हैं–

''जैन धर्म का मूल है, स्याद्वाद पहचान।
अनेकांत से नित चलें, गुरुजन सीख महान॥''

सागर में मानव जीवन की दुर्लभता और उसमें भी जैन कुल की प्राप्ति महादुर्लभ बताई गई है। जैन कुल में उत्पन्न होकर वीतरागी देव-शास्त्र गुरु की उपासना व सेवा की अतिशय प्रशंसा करते हुए कवि लिखते हैं–

चारों गति में मानव-जीवन, दुर्लभ है समझा जाता।
उनमें भी वह जैन सुकुल जो, दुर्लभतम माना जाता॥
वीतरागमय देव-शास्त्र व, साधु मिले वह भाग्य रहा।
गुरु-उपदेश व वैयावृत्ति, बड़ा पुण्य सौभाग्य रहा॥

तुलसीदास ने लिखा है कि-

''संत समागम हरि कृपा तुलसी दुर्लभ दोय''

इसी बात को रेखांकित करते हुए कवि आर्जवसागरजी तीर्थोदय काव्य में लिखते हैं-

अगर जगत् में साधुजनों का, योग नहीं वह मिलता है।
भविक जनों को धर्ममार्ग का, न कदापि सुख मिलता है॥
जैसे सूरज के अभाव में, क्या दल कमलों का खिलता ?
साधुजनों के उपदेशों से- भव्यजनों को सुख मिलता॥

साधुजनों की सेवा में पूरी भक्ति व श्रद्धा बनाए रखने और किसी भी गंभीर बीमारी के समय भी मन खराब न करने का उपदेश देते हुए कविराज कहते हैं-

''कभी देख लो कुष्ट रोग भी, मुनि को घेरे में लाता।
धवल-धवल से धब्बे पड़ते, तन दुर्गंधित बन जाता॥
सम्यक्त्वी जन सदा साधु को, भोजनादि दे सेवक हैं।
नहीं घृणा से देखें मुनि को, जैनी सच्चे श्रावक हैं॥

तीर्थंकर प्रकृति का बंध कराने वाली षोडसकारण भावनाओं में प्रवचन-वात्सल्य भावना की महिमा गाते हुए आचार्य आर्जवसागर गाय- बछड़े के निश्छल प्रेम का उदाहरण देते हैं-

यथा गाय-बछड़े से करती, अंतरंग से प्रेम सदा।
उसी तरह धर्मीजन धर्मी-से करते अनुराग सदा॥
दु:ख हो सुख हो सभी कार्य में, धर्मी को अपना मानें।
वात्सल्य से गले लगायें, नहीं भेद रखना जानें॥

दूसरों के गुण ग्रहण कर दोषों की ओर दृष्टिपात न करना ही सच्चे व अच्छे मानव की पहचान है। इसी अच्छाई का विस्तार ही मोक्षमार्ग प्रशस्त करता है। कृतिकार तीर्थोदय काव्य में ठीक ही लिखते हैं-

पूज्य-पुरुष-सम तदनुसार जो, क्रिया पालते शुभकारी।
नहीं दोष में, ग्राह्य सुगुण में, रखें दृष्टि भवि सुखकारी॥

उपर्युक्त सभी उदाहरणों से यह सुप्रमाणित होता है कि कृतिकार आर्जवसागरजी महाराज ने अपनी इस कालजयी रचना में जीवन के सभी पहलुओं को समेटा है। धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, श्रावक व साधु के आचरण और जीवन को समग्रता से सार्थकता के साथ जीने का मार्ग इस तीर्थोदय गंगोत्री से निकलता है।

काव्य कला की दृष्टि से भी यह खण्डकाव्य अनुपमेय बन पड़ा है। रचना आर्जवसागरजी के नाम

के अनुरूप ढलती चली गई है। इसमें सरल अभिव्यक्ति जहाँ सर्वजन प्रियता को बढ़ाती है वहीं अलंकारों, छंदों व रसों का मणिकांचन संयोग विद्वानों को आकर्षित करता है। विषय आगम व दर्शन का भले हो पर अभिव्यक्ति आम जन व जीवन की ही लगती है। यही कारण है कि कृति युग-गुग तक आने वाली पीढ़ियों के प्राणियों के हृदय में धर्मोदय, ज्ञानोदय की अलौकिक ज्योति जलाती रहेगी। इस महान कृति के रचयिता अमर हों और यह काव्य भी कालजयी हो ऐसी मंगल कामना के साथ गुरुदेव के चरणों में अनंतानंत नमन-

''विद्यागुरु के लाडले, आर्जवसागर नाम।
तीर्थोदय रचकर किया, गुरुवर अद्‌भुत काम॥
भाव सरल जीवन सरल, कठिन नहीं कुछ काम।
तुम-सा बन मैं भी तरूं, पा जाऊँ निज धाम''॥

इत्यलं

मो. 9926494401

घड़े की शिक्षा

-आचार्यश्री आर्जवसागर

मानव को शिक्षित करने में प्रकृति भी एक सहायक साधन है। हम भले ही यह सोचते हों कि प्रभु ही हमें मुक्ति का या परोपकार का मार्ग बताते हैं लेकिन ज्ञानियों के साथ-साथ उन वृक्ष, पर्वत, नदियों, पशु, पक्षियों और यहाँ तक कि मिट्टी जैसे पदार्थों से भी हमें धर्म का मार्ग प्रशस्त करने के लिए कुछ पाठ सीखने को मिलता है।

इस सन्दर्भ में हम एक उदाहरण के द्वारा मिट्टी एवं घड़े से मिलने वाली मोक्षमार्ग में उपयोगी शिक्षा को समझेंगे जिस रूपक के मध्य में हमें गुरुवर आचार्यश्री विद्यासागरजी द्वारा रचित 'मूकमाटी' कृति के कुछ संदर्भ भी स्मरण में आयेंगे एवं गुरु शिष्य का सम्बन्ध सद्‌गुरुओं का उपकार तथा संसार से मोक्ष की यात्रा का मंगलमय प्रसंग उपस्थित होगा।

एक बार की बात है, ग्रीष्म काल का समय था, एक सेठ को प्यास सताती है वह सोचता है कि अब मुझे घड़े की आवश्यकता है जिसके माध्यम से गर्म पानी को ठण्डा बनाया जाता है और स्वयं ही घड़ा लाने हेतु कुम्भकार के गृह की ओर चल देता है। कुम्भकार के गृह पहुँचते ही कुम्भकार सेठ को देखते ही उठकर प्रणाम करता है और कहता है आइए सेठ जी! सेवा का अवसर दीजिए।

सेठ जी - घट खरीदने आया हूँ।

कुम्भकार - हाँ लीजिए! ये घट आपके ही हैं; और सेठ जी आपको इतना कष्ट उठाने की क्या जरूरत थी किसी नौकर को ही भेज देते?

सेठ जी - हाँ भेज तो सकता था; लेकिन अपने मन की वस्तु पाने के लिए प्रत्यक्ष जाना उचित समझा।

सेठ जी ने एक घड़े को अपने हाथों में ऊपर ले लिया और उसे अपनी तर्जनी अँगुली से ज्यों ही बजाया तो उस घट से मधुर सप्त स्वर निकल पड़े सा रे ग म प द नी जिसका अर्थ सेठ जी को ऐसा भाषित हुआ कि जैसे आचार्यश्री (विद्यासागरजी) ने अपनी 'मूक माटी' कृति में लिखा है कि सारे 'गम' आत्मा के पद अर्थात् स्थान नहीं हैं; ऐसे उस कुम्भ (घड़े) के उपदेश से सेठजी बड़े प्रभावित हुए और वे उस कुम्भ से एक प्रश्न करते हैं कि- हे कुम्भ! तुम्हारे पास ऐसी अद्‌भुत शक्ति कहाँ से आई कि जिस कारण तुम अपने शत्रु जैसे पानी को जो मिट्टी को गलाकर उसका रूप-स्वरूप ही बिगाड़कर रख देता है; और विभाव से युक्त वह गर्म पानी जिसको तुम धारण कर ठण्डा बनाते हो तथा सारे संसार को यह उपदेश देते हो कि सारे संसार के 'गम' अर्थात् दु:ख आत्मा के पद अर्थात् स्थान नहीं हैं अत: दु:ख को समता से सहकर गुरुओं के चरणों में जाकर मोक्षमार्ग में ढलकर आत्मा से परमात्मा बनो?

तब कुम्भ कहता है कि हे सेठ जी! मैं बहुत लम्बी यात्रा पूर्ण करके आया हूँ। अगर तुम सुनना चाहते हो तो सुनाता हूँ। सेठ जी कहते हैं कि अवश्य सुनाओ जिससे कि मेरा जीवन कुछ नया मोड़ लेकर मुक्ति पथ की यात्रा कर सके और तुम्हारे जैसी सहनशीलता धारण कर सके। कुम्भ कहता है कि सेठ जी एक समय वह था जब मेरा कोई मूल्य नहीं था; मैं मिट्टी रूप में नीचे पड़ा रहता था, मेरे ऊपर से लोग मुझे पैरों से कुचलते हुए

निकलते थे, मेरे ऊपर मल-मूत्र का क्षेपण करते थे और क्या बताऊँ कि एक बार ऐसा विकट समय आया कि कोई व्यक्ति (कुम्भकार) एक कुदाली लेकर आया और मेरे ऊपर जब कुदाली चलाई तो मेरा रोम-रोम काँप उठा, लेकिन मालूम नहीं था मुझे कि यह सौभाग्य का ही विषय था कि उसने दोनों हाथों से मुझे एक बर्तन में रखा और सिर पर धारण कर अपने घर ले चला, मेरे आनन्द का पार नहीं रहा, घर पहुँचते-पहुँचते शाम हो गई और घर पहुँचते ही मुझे जमीन पर पटक दिया, मेरे प्राण-से निकल गए और मेरे अस्तित्व को बिखेर देने वाले पानी को मेरे ऊपर डाल दिया, रात भर में मेरे शरीर का बंधन ढीला हो गया, सुबह होते ही मुझे पैरों से कुचल-कुचलकर तरल बनाया, मेरे अन्दर से कंकड़, पत्थर बाहर निकाल कर फेंके और बड़े वात्सल्य से मेरा लोंदा बनाकर मुझे चाक के बीच रखा, मानलो कि मुझे एक आसन पर ही बिठाया हो; लेकिन ज्यों ही एक डण्डा उठाया तो मेरा भय के कारण पूरा शरीर कांप उठा; लेकिन वह डण्डा; मारने के लिए नहीं उठाया था ऐसा मैंने उस डण्डे से चाक घुमाये जाने पर जाना। चाक पर घूमते-घूमते मुझे चक्कर-सा आने लगा, कुम्भकार ने फिर अपने कोमल-कोमल हाथों से मुझे छू कर एक नया आकार दिया, गोल-मटोल बनाया, अन्दर जल धारण हेतु घट का आकार दिया, फिर छाँव में सुखाया और कुछ कमी दिखते ही अन्दर हाथ पसार के बाहर से चोटें लगाई अर्थात् ठोक-पीटकर मुझे सुन्दर बनाया फिर अच्छी धूप में सुखाकर अन्त में अबे की अग्नि में मेरी अन्तिम परीक्षा ली। वह अग्नि मेरे कण-कण में प्रवेश कर गई और मेरे अनावश्यक तत्वों को जलाकर पूर्ण शुद्ध बनाकर मुझे जल धारण के योग्य एवं गर्म व विभाव अवस्था में परिणत जल को शीतल स्वभाव में लाने के योग्य बनाया। यह सब कुम्भकार का ही उपकार है मिट्टी रूप उपादान मेरा होते हुए भी कुदाली आदिक अनेक साधनों से युक्त वह कुम्भकार हमारे रूप-स्वरूप को बनाने में प्रेरक निमित्त रहा है क्योंकि निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध के बिना कार्य की सिद्धि असम्भव है। इस प्रकार कुम्भ ने सेठ जी के कहे जाने पर अपनी मिट्टी से लेकर घड़े तक की यात्रा कह सुनाई।

सेठजी बोले कि हे कुम्भ! तुम्हारी यह मिट्टी से कुम्भ तक की यात्रा बड़ी श्रेष्ठ यात्रा है, लगता है कि इसमें पूरी मोक्ष की शिक्षा भरी है।

कुम्भ बोला हाँ सेठ जी! मेरी इस मिट्टी से कुम्भ रूप यात्रामय जीवन से मोक्षमार्ग की मंगलमय शुभ यात्रा का उपदेश अवश्य मिलता है, लगता है आप इसे भी सुनना चाहते हैं तो सुनिए मैं सुनाता हूँ..... बिना किसी मूल्य के मिट्टी का नीचे पड़ा रहना; शिष्य का असंयमी अवस्था में रहने का संकेत है। कुम्भकार से मिट्टी का डरना यह शिष्य की अज्ञान अवस्था का द्योतक है। मिट्टी को उठाकर सिर पर रख लेना गुरु धर्मोपदेश के द्वारा भव्य शिष्यों को धर्म के मार्ग में प्रेरित और स्थिर करते हैं यह बतलाता है। मिट्टी में जल का मिश्रण करना शिष्य गणों से त्याग या नियम, संकल्पों से सम्बन्ध कराना सिखलाता है। मिट्टी में से कंकड़, पत्थरों को निकालकर फेंक देना शिष्य गणों को अवगुणों से दूर कर निर्दोष बनाने का उद्यम है। मिट्टी को चाक पर चढ़ाना (रखना) शिष्यों को मोक्षमार्ग पर स्थिर करने हेतु उन्हें एक योग्य अवस्था को प्राप्त कराना है। कुम्भकार द्वारा चाक पर स्थित मिट्टी को कोमल हाथों से सम्हालकर आकार देना गुरुओं के द्वारा शिष्यों को दीक्षा देकर योग्य साधक साधु बनाया जाना है। कच्चे कुम्भ को छाया में सुखाया जाना बतलाता है कि गुरु शिष्य को दीक्षा देकर बाह्य तप

में तपाकर शिष्य के राग या पापकर्म रूपी जल को सुखाते हैं। घड़े को अन्दर हाथ लगाकर ऊपर से चोट मारकर सुडौल सुन्दर बनाना यह बतलाता है कि गुरु अपने शिष्य के प्रति अन्तस् में उन्नति की भावना रखते हुए शिष्य से कोई सदोष कार्य होने पर उसे डाटते हुए प्रायश्चित्त देते हैं और उसे शुद्ध बनाते हैं। कुम्भ को धूप में सुखाया जाना हमें यह उपदेश देता है कि प्रायश्चित्त से लेकर ध्यान तक तपों में तपे बिना आत्मा केवलज्ञान से परिपूर्ण नहीं बन सकती। और अन्त में कुम्भ को अग्नि के अबे में तपाया व जलाया जाना यह बतलाता है कि आत्मा के कर्म जले बिना यह आत्मा जन्म-मरण की परम्परा से छूटकर मोक्ष प्राप्त नहीं कर सकती। जिस आत्मा ने अपने कर्मों को जलाकर मुक्तावस्था को प्राप्त कर लिया तो समझो वह पवित्रात्मा आकुलता-व्याकुलता रूप विभाव अवस्था को प्राप्त आत्माओं को स्वभाव में लाने योग्य बन जाती है अर्थात् ऐसी शुद्ध आत्मा की शरण को प्राप्त होकर संसारी आत्माएँ स्वयमेव स्वभाव की ओर आने लग जाती हैं। इस प्रकार कुम्भ ने कहा कि हे सेठजी! यही मिट्टी से घड़े तक की यात्रा में मोक्षमार्ग की मंगलमय यात्रा की शिक्षा मिलती है जो आत्मा को मोक्ष पहुँचाकर अजर-अमर बना देती है।

सेठ जी ने कहा, धन्य है तुम्हारी साधना, धन्य है तुम्हारा जीवन, जिसने मेरे जीवन में बड़ा परिवर्तन लाया। बड़े आनन्द के साथ सेठ जी ने घड़े को उठाया और सिर पर रखकर अपने घर ले चला और घर पर पहुँचते ही विभाव में परिणत गर्म पानी को घट में भरते ही उस घट ने गर्म जल को तुरन्त ठण्डा बनाना प्रारम्भ किया, थोड़ी ही देर में ठण्डे पानी को पीकर सेठ ने बड़ी तृप्ति का अनुभव किया और सारे 'गम' जो आत्मा के स्थान नहीं है, उन्हें भूल गया। आगे हम इस घड़े को मंगल कलश बनाकर प्रभु की पूजा करेंगे और साधुओं का प्रतिग्रहण करेंगे इन अरमानों में खो गया। ये अरमान एक दिन कुम्भ की यात्रा-सम मोक्ष मार्ग की यात्रा कराकर हमें परमार्थ की साधना कराएंगे ऐसे चिन्तन में लीन हो गया। ऐसे घड़े और मिट्टी का रूपक गहराई से समझने के लिए परम श्रद्धेय गुरुवर आचार्य श्री १०८ विद्यासागर जी महाराज द्वारा विरचित अनेकान्त से ओत-प्रोत ''मूक-माटी'' महाकाव्य कृति भव्य जनों द्वारा अवश्य पठनीय है।

उपर्युक्त दृष्टान्त तो मिट्टी का हुआ, लेकिन मिट्टी और कुम्भ मात्र नहीं, वे वृक्ष भी हमें सिखलाते हैं कि किसी के पत्थर मारे जाने पर भी फल देकर किसी का नि:स्वार्थ उपकार करना नहीं भूलना चाहिए। वे पर्वत भी बतलाते हैं कि पानी गिरते ही वे जन उपकार हेतु जलधारा नीचे बहा देते हैं क्योंकि अनावश्यक संग्रह वृत्ति जीवन को दूषित बना देती है। वे नदियाँ कहती हैं कि कोई कितने भी गंदे पदार्थों का सम्पर्क कराए तो भी हमारा कर्त्तव्य तो यह है कि उसे शुद्ध बनाकर निर्मल जल उपलब्ध कराकर हम सभी को सुखी करें। वह गाय कहती है कि स्वावलम्बी बन जंगल से कुछ खा-पीकर रक्षक के घर आकर बिना कुछ लिए मीठा-मीठा दूध देना हमारा कर्त्तव्य है। वे तोता, कोयल जैसे पक्षी भी रात्रि में न खाने, न बोलने से हमें खाने-पीने और बोलने पर संयम रखना सिखलाते हैं। इस प्रकार, लोक में रहने वाले नन्हें-नन्हें प्राणियों से भी एवं प्रकृति प्रदत्त जीवन से भी बहुमूल्य शिक्षा ग्रहण कर अपना जीवन सदाचारमय अवश्य बना सकते हैं।

-साभार परमार्थ साधना

सम्यग्ज्ञान-भूषण एवं सिद्धांत-भूषण पदवी हेतु भाव-विज्ञान धार्मिक परीक्षा बोर्ड, भोपाल द्वारा स्वीकृत

आचार्यश्री आर्जवसागर विरचित

आगम-अनुयोग

[प्रश्नोत्तर-प्रदीप]

करणानुयोग

प्र. 625 ढाई द्वीप के बाहर स्थित कौन-सी भूमियाँ कहलाती हैं ?

उत्तर ढाई द्वीप की सीमा पर स्थित मानुषोत्तर पर्वत से लेकर अंतिम स्वयंप्रभ पर्वत तक असंख्यात द्वीप समुद्रों में होने वाली भूमियाँ जघन्य भोगभूमियाँ कहलाती हैं।

प्र. 626 स्वयंप्रभ पर्वत कहाँ पर स्थित है?

उत्तर स्वयंप्रभ (नागेन्द्र) पर्वत; अंतिम स्वयंभूरमण द्वीप के बीचोंबीच (मध्य) में वलयाकार रूप से अवस्थित है।

प्र. 627 ढाई द्वीप के बाहर जघन्य भोगभूमियों तक कौन-से जीव पाए जाते हैं ?

उत्तर ऐसी जघन्य भोगभूमियों में संज्ञी पंचेन्द्रिय का सद्भाव एवं विकलेन्द्रिय जीवों का अभाव होता है। (भूमि पृथ्वीकायिक है।)

प्र. 628 ढाई द्वीप के बाहर स्वयंप्रभ पर्वत तक स्थित समुद्रों में कौन-से जीव पाये जाते हैं?

उत्तर इन मानुषोत्तर और स्वयंप्रभ पर्वत के मध्यस्थित समुद्रों में विकलत्रय व जलचर जीवों का अभाव है। (जल, पृथ्वी एकेन्द्रिकायिक है।)

प्र. 629 स्वयंप्रभ पर्वत के बाहर स्थित स्वयंभूरमण द्वीप और स्वयंभूरमण समुद्र का वातावरण किस प्रकार का होता है?

उत्तर स्वयंभूरमण द्वीप और समुद्र का वातावरण दुषमा सुषमा काल रूप कर्मभूमि के प्रकार का होता है।

प्र. 630 स्वयंभूरमण द्वीप में कौन-से जीव पाये जाते हैं ?

उत्तर स्वयंभूरमण द्वीप में मनुष्यों के अलावा कर्मभूमि सदृश सकलेन्द्रिय, विकलेन्द्रियादि सर्व तरह के तिर्यंच जीव पाये जाते हैं।

प्र. 631 स्वयंभूरमण समुद्र में कौन-से जीव पाये जाते हैं ?

उत्तर स्वयंभूरमण समुद्र में तन्दुल मच्छ, राघव मच्छ आदि सकलेन्द्रिय तथा द्वीन्द्रिय आदि विकलेन्द्रिय जीव भी पाये जाते हैं।

प्र. 632 स्वयंभूरमण द्वीप स्थित स्वयंप्रभ पर्वत के बाह्य भाग में पाये जाने वाले तिर्यंच क्या देश संयम धारण कर सकते हैं?

उत्तर हाँ! वहाँ रहने वाले संज्ञी पंचेन्द्रिय (बहुसंख्यक) तिर्यंच जातिस्मरण या देवों से संबोधन पाकर अणुव्रत धारण कर स्वर्गिक (बहुसंख्यक) देव स्थानों की पूर्ति करते हैं, अर्थात् कल्पवासी देव स्थानों

(पर्यायों) को प्राप्त करते हैं। (जम्बूद्वीप या मध्यलोक वर्णन देखें जैनागमसंस्कार अ.१३, पृ.११८ पर)

प्र. 633 वृषभगिरि पर्वत कहाँ पर स्थित है?

उत्तर वृषभगिरि पर्वत; भरत क्षेत्र के मध्य में स्थित षड्खण्डों के विभाजक रूप विजयार्ध पर्वत की उत्तर दिशि में स्थित मध्य म्लेच्छखण्ड के बीचों-बीच गोलाकार पर स्थित है।

प्र. 634 वृषभगिरि पर्वत की क्या विशेषता है?

उत्तर चक्रवर्ती द्वारा षट्खण्डों पर विजय प्राप्ति के उपरान्त चक्रवर्ती का नाम वृषभगिरि के ऊपर अंकित किया जाता है यह इस पर्वत की विशेषता है।

प्र. 635 विजयार्ध पर्वत कैसा और कितने विस्तार वाला है?

उत्तर विजयार्ध पर्वत भरत क्षेत्र में पूर्व-पश्चिम लम्बायमान पच्चीस योजन ऊँचा एवं पचास योजन चौड़े विस्तार वाला है।

प्र. 636 विजयार्ध पर्वत के ऊपर क्या विशेष रचना है?

उत्तर विजयार्ध पर्वत में भूतल से दस योजन ऊपर जाकर इसकी उत्तर-दक्षिण दिशा में विद्याधरों के नगरों की दो शाश्वत श्रेणियाँ हैं। वहाँ दक्षिण श्रेणी में पचपन और उत्तर श्रेणी में साठ नगर हैं। इन श्रेणियों से भी दस योजन ऊपर जाकर उसी प्रकार दक्षिण व उत्तर दिशा में अभियोग देवों की श्रेणियाँ हैं। इसके ऊपर नौकूट हैं पूर्व दिशा के कूट पर सिद्धायतन (जिनमंदिर) है और शेष कूटों पर यथा योग्य नामधारी व्यन्तर व भवनवासी देव रहते हैं।

प्र. 637 विजयार्ध पर्वत के मूल भाग में क्या विशेषता है?

उत्तर विजयार्ध पर्वत के मूल भाग में पूर्व व पश्चिम दिशाओं में तमिस्र व खण्डप्रताप नाम की दो लम्बी गुफाएँ हैं जिनमें क्रमश: गंगा व सिन्धु नदी प्रवेश करती हैं। इन गुफाओं के भीतर बहु मध्यभाग में दोनों तटों से उन्मग्ना एवं निमग्ना नाम की दो नदियाँ निकलती हैं जो गंगा और सिन्धु में मिल जाती हैं।

प्र. 638 उन्मग्ना और निमग्ना नदियों की क्या विशेषता है?

उत्तर उन्मग्ना नदी के कुण्ड में डाली हुई वस्तु नीचे से ऊपर की ओर आ जाती है और निमग्ना नदी में डाली वस्तु ऊपर से नीचे की ओर चली जाती है।

प्र. 639 विजयार्ध नामक पर्वत मात्र भरत क्षेत्र में ही है या अन्य क्षेत्र में भी है?

उत्तर भरत क्षेत्र की भांति ऐरावत क्षेत्र के मध्य में भी एक विजयार्ध है जिसका सम्पूर्ण कथन भरतस्थ विजयार्धवत् ही है, कूटों व तन्निवासी देवों के नाम भिन्न हैं। विदेह क्षेत्र के बत्तीस उपविदेहों में प्रत्येक के मध्यपूर्वा पर लम्बायमान विजयार्ध पर्वत है, जिनका सम्पूर्ण वर्णन भरत के विजयार्धवत् है। विशेषता यह है कि यहाँ उत्तर व दक्षिण दोनों श्रेणियों में पचपन-पचपन नगर हैं, इनके ऊपर नौ, नौ कूट हैं, परन्तु उनके व उन पर रहने वाले देवों तथा प्रमुख नदियों के नाम भिन्न हैं। (त्रि.सा.)

प्र. 640 विजयार्ध पर्वत के ऊपर कौन-सी भूमि अवस्थित होती है और वहाँ कौन-सा काल चलता है?

उत्तर विजयार्ध पर्वत पर सदा कर्म भूमि अवस्थित होती है और वहाँ हमेशा एक सदृश दुषमा-सुषमा

(वर्तमान अवसर्पिणी के चतुर्थकाल के समान) काल चलता रहता है।

प्र. 641 विजयार्ध पर्वत के ऊपर स्थित अकृत्रिम विजयार्ध श्रेणियों से विद्याधर मनुष्यों या दुषमासुषमा काल से सम्बन्धित मनुष्यों के लिए संयम धारण की योग्यता, कैवल्य की उपलब्धि और मोक्ष की प्राप्ति सदा काल सम्भव होती है क्या?

उत्तर हाँ! वहाँ सदा काल दुषमासुषमा काल का वातावरण होने, उत्तम संहननादि के भी निमित्त मिलने पर संयम, कैवल्य और मोक्ष की प्राप्ति सदा संभव है।

प्र. 642 विजयार्ध पर्वत के विद्याधरों का विदेह क्षेत्रादि में गमना-गमन आज भी संभव होता है क्या?

उत्तर विद्याधर मनुष्य विद्याओं के स्वामी होते हैं वे आकाशगामनी विद्याओं द्वारा ढाई द्वीप में कभी भी कहीं भी गमना-गमन कर सकते हैं।

प्र. 643 आज इस भरत क्षेत्र आर्यखण्ड में चतुर्थ काल के समान इस पंचम काल में विद्याधर क्यों नहीं दिखाई देते ?

उत्तर चतुर्थ काल में यहाँ भरत क्षेत्र के आर्यखण्ड में भी विजयार्ध श्रेणी जैसा दुषमासुषमा काल का वातावरण था। आयु, उत्सेधादि समान थे और लोग बड़े पुण्यवान भी थे अत: विजयार्ध श्रेणी के तद्‌भवमोक्षगामी हनुमान व अधोगामी रावण जैसे विद्याधरों का निवास इस आर्यखण्ड में सहज संभव था लेकिन आज वहाँ के विद्याधरों का अदृश्यरूप में आना-जाना सम्भव होते हुए भी साक्षात्कार होना असंभव है।

प्र. 644 युग परिवर्तन किसे कहते हैं?

उत्तर दो कल्पों का एक युग होता है ऐसे कल्पकालों के परिवर्तन का नाम युग परिवर्तन कहलाता है।

प्र. 645 कल्पकाल किसे कहते हैं ?

उत्तर उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी मिलकर एक कल्पकाल कहे जाते हैं।

प्र. 646 कल्पकाल में काल संख्या कितनी होती है?

उत्तर दस-दस कोड़ा-कोड़ी सागरोपम काल प्रमाण वाले क्रमश: अवसर्पिणी और अवसर्पिणी (काल का संयुक्त) रूप कल्पकाल की काल संख्या बीस कोड़ा-कोड़ी सागरोपम है।

प्र. 647 उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी में होने वाले छह-छह कालों के नाम और उनमें काल संख्या का विभाजन किस तरह से है ?

उत्तर

	षटकालों के नाम	**काल संख्या**
अवसर्पिणी	सुषमसुषमा काल	-चार कोड़ाकोड़ी सागरोपम
	सुषमा काल	-तीन कोड़ाकोड़ी सागरोपम
	सुषमदुष्षमकाल	-दो कोड़ाकोड़ी सागरोपम
	दुष्षमसुषमा काल	-ब्यालीस हजार वर्ष कम एक कोड़ाकोड़ी सागरोपम
	दुष्षमा काल	-इक्कीस हजार वर्ष

	अतिदुष्षमा काल	–इक्कीस हजार वर्ष
उत्सर्पिणी	दुष्षमदुष्षम काल	–इक्कीस हजार वर्ष
	दुष्षमाकाल	–इक्कीस हजार वर्ष
	दुष्षमसुषमाकाल	–ब्यालीस हजार वर्ष कम एक कोड़ाकोड़ी सागरोपम
	सुषमदुष्षमाकाल	–दो कोड़ाकोड़ी सासगरोपम
	सुषमाकाल	–तीन कोड़ाकोड़ी सागरोपम
	अतिसुषमाकाल	–चार कोड़ाकोड़ी सागरोपम

प्र. 648 इन कालों में भोग भूमि व कर्म भूमि की व्यवस्था कब-कब होती है ?

उत्तर अवसर्पिणी के प्रथम तीन कालों में एवं उत्पसर्पिणी अंत के तीन कालों में भोगभूमि तथा अवसर्पिणी के अंत तीन कालों में एवं उत्सर्पिणी के प्रथम तीन कालों में कर्मभूमि की व्यवस्था होती है।

प्र.649 उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी की भावात्मक व्याख्या किस तरह की है ?

उत्तर शारीरिक ऊँचाई, आयु, बल, ऋद्धि और तेज आदिक जिन समयों में उत् अर्थात् उत्कृष्ट या वृद्धि को प्राप्त होते चले जाते हैं वह उत्सर्पिणी और जिन समयों में अव अर्थात् अनुत्कृष्ट या हीन होते चले जाते हैं वह अवसर्पिणी काल कहलाता है।

प्र. 650 सुषमा, दु:षमा का लक्षण क्या है ?

उत्तर 'समा' काल के विभाग को कहते हैं तथा सु और दुर् उपसर्ग क्रम से अच्छे और बुरे अर्थ में आते हैं। सु और दुर् को समा के जोड़ने पर तथा व्याकरणानुसार 'स' को 'ष' कर देने से सुषमा और दु:षमा शब्दों की सिद्धि होती है। जिसका अर्थ सुखद् या दु:खद काल होता है।

प्र. 651 सुषमा-सुषमाकाल आदि की भोगभूमियों में पृथ्वी का वातावरण किस तरह का है?

उत्तर इन भोग भूमियों में भूमि धूल, धूम, अग्नि और हिम से रहित तथा कण्टक, बर्फ एवं द्वि, त्रि और चतुरिन्द्रिय रूप विकलेन्द्रिय जीवों से रहित होती है, तथा इन कालों में भूमि; तन, मन और नयनों को सुखदायक, रत्नों से भरी व दर्पणवत् दर्शित होती है।

प्र. 652 भोग-भूमियों का प्रकृतिक सौंदर्य और किस तरह का है ?

उत्तर भोगभूमियों में कोमल घास व फलों से लदे वृक्ष, कमलों से परिपूर्ण वाटिकाएँ, सुन्दर भवन, कल्पवृक्षों से परिपूर्ण पर्वत और सुन्दर नदियाँ हैं, तथा जहाँ दिन रात्रि का भेद, शीत व गर्मी की वेदना का अभाव रहता है।

प्र. 653 भोग-भूमि में मनुष्यों की प्रकृति किस तरह की होती है ?

उत्तर भोग-भूमि में अनुपम लावण्य से परिपूर्ण सुख सागर में मग्न, मार्दव एवं आर्जव गुण से सहित मन्द

कषायी सुशीलतापूर्ण भोग-भूमि में मनुष्य होते हैं। वे मनुष्य गुणियों के गुणों में अनुरक्त, जिन पूजन करते हैं। उपवासादि संयम के धारक परिग्रह रहित यतियों को आहार दान देने में तत्पर रहते हैं। (ति.प.३६५-३६७)

प्र.654 भोग-भूमि के मनुष्य किस कार्य से रहित होते हैं?

उत्तर भोग-भूमि के मनुष्य मांसाहार के त्यागी, उदम्बर फलों के त्यागी, असत्य के व्यवहार से रहित, परस्त्री भोग के त्यागी और परवस्तु हरण की भावना से रहित होते हैं। तथा उनके तन से मल, मूत्र का स्राव नहीं होता है।

प्र.655.भोग-भूमि के मनुष्यों में विक्रिया और आभरण की क्या विशेषता होती है?

उत्तर भोग-भूमि के मनुष्य विक्रिया से बहुत से शरीरों को बनाकर अनेक प्रकार के भोगों को पूर्ण आयु पर्यंत भोगते हैं तथा स्वभाव से ही मुकुट, हार आदि आभूषणों से युक्त होते हैं।

प्र.656 भोग-भूमि में मनुष्यों के लिए भोज्य व्यञ्जन एवं अलंकार भवन आदि रूप भोगोपभोग पदार्थ किस तरह उपलब्ध होते हैं?

उत्तर भोग-भूमि में सर्व भोगोपभोग पदार्थ वहाँ भोग-भूमिज जीवों के पुण्य से सुस्थित कल्प वृक्षों से प्राप्त होते हैं। (कल्पवृक्षों का सुन्दर विवरण इसी कृति के प्रारम्भ में प्रथमानुयोग के विषय में वर्णित किया गया है।)

प्र.657 भोग-भूमि में जीवों का गर्भधारण व जन्म-मरण किस तरह होता है?

उत्तर भोग-भूमि में मनुष्य और तिर्यञ्चों की नौमास आयु शेष रहने पर गर्भ रहता है और मृत्यु-समय आने पर युगल बालक-बालिका का जन्म लेते हैं। नवमास पूर्ण होने पर गर्भ से युगल निकलते ही तत्काल ही माता-पिता मरण को प्राप्त हो जाते हैं अर्थात् पुरुष की छींक आने से और स्त्री को जंभाई आने से मृत्यु हो जाती है।

प्र.658 उत्तम, मध्यम एवं जघन्य भोगभूमिज जीवों को अंगूठे-चूसने, उपवेशन (बैठना) आदि सप्त अवस्थाओं में कितना-कितना काल अपेक्षित (लगता) है?

उत्तर उत्तम, मध्यम और जघन्य भोग-भूमिज जीवों को अंगूठा चूसने, उपवेशन, अस्थिरगमन, स्थिर गमन, कलागुणों की प्राप्ति, तारुण्य और सम्यग्दर्शन रूप इन सप्त अवस्थाओं में क्रमश: 3-3, 5-5 और 7-7 दिनों का काल आपेक्षित होता है। अर्थात् उत्तम भोगभूमि का जीव २१ दिनों में सम्यग्दर्शन तक की अवस्था प्राप्त करने के योग्य हो पाता है। इसी तरह मध्यम भोग-भूमि में 35 दिनों में तथा जघन्य भोगभूमि में 49 दिनों में सम्यक्त्व की भी प्राप्ति के योग्य हो पाता है।

प्र.659 भोग-भूमिज मनुष्यों के लिए अंगूठे से से क्या महत्त्व प्रदर्शित होता है?

उत्तर भोग-भूमिज मनुष्यों के अंगूठे से अमृत झरता है और वह अमृत उनके अविलम्ब शारीरिक विकास में कारण बनता है।

प्र.660 भोग-भूमिज मनुष्य जीवन में कितनी कलाओं में निपुण होते हैं?

उत्तर भोग-भूमिज मनुष्य पूर्ण जीवन में अक्षरकला, चित्रकला, गणित, गन्धर्व (संगीत) और शिल्प आदि चौसठ कलाओं में स्वभाव से अतिशय निपुण होते हैं।

प्र. 661 उत्तम, मध्यम और जघन्य रूप अशाश्वत भोग-भूमियों में जीवों के ऋद्धि, तेज आदि सदा समान ही रहते हैं क्या या कोई विशेषता है ?

उत्तर अवसर्पिणी काल सम्बन्धी भोग-भूमियों में जीवों के शारीरिक उत्सेध, आयु, बल, ऋद्धि (विक्रिया) और तेज आदि हीन-हीन होते चले जाते हैं। (भोग-भूमियों में उत्सेध, आहारादि देखिये जैनागम संस्कार अध्याय 13 पृ. 65)

प्र. 662 भोग-भूमियों में तिर्यञ्चों के सद्भाव एवं अनके आहार सम्बन्धी क्या विशेषता है ?

उत्तर भोग-भूमियों में गाय, सिंह, हाथी, शृंगाल, शूकर, सारंग, रोझ, भैंस, बन्दर, गवय, कोयल, तोता, कबूतर और राजहंस आदि तिर्यञ्च कल्पवृक्षों से प्राप्त शाकाहार का मनवांछित स्वादिष्ट भोग करते हैं।

प्र. 663 वर्तमान दुषमसुषमा (चतुर्थकाल) कब प्रारम्भ हुआ था ?

उत्तर ऋषभनाथ तीर्थंकर के निर्वाण होने के पश्चात् तीन वर्ष और साढ़े आठ मास के व्यतीत होने पर दुषमसुषमा नामक चतुर्थ काल प्रारम्भ हुआ था।

प्र. 664 दुषमा काल प्रारम्भ के कितने वर्ष पूर्व महावीर भगवान् को निर्वाण प्राप्त हुआ ?

उत्तर दुषमा नामक पञ्चम काल के प्रारम्भ में तीन वर्ष, आठ मास एक पक्ष के शेष रहने पर तीर्थंकर महावीर भगवान् को निर्वाण की प्राप्ति हुयी थी।

प्र. 665 भगवान महावीर के निर्वाण के उपरान्त कौन-से अनुबद्ध केवली हुए थे ?

उत्तर भगवान महावीर के निर्वाणोपरान्त गौतम स्वामी, सुधर्मस्वामी और जम्बूस्वामी तीन अनुबद्ध केवली हुए थे।

प्र. 666 केवलियों के निर्वाणोपरान्त ग्यारह अंग और चौदह पूर्व ज्ञान (द्वादशांग) रूप सम्पूर्णश्रुत के ज्ञाता कौन-से पाँच श्रुतकेवली हुए थे ?

उत्तर प्रथम श्रुतकेवली विष्णु आचार्य हुए। द्वितीय श्रुतकेवली नन्दिमित्र आचार्य हुए। तृतीय श्रुतकेवली अपराजित आचार्य हुए। चतुर्थ श्रुतकेवली गोवर्धन आचार्य हुए और पंचम श्रुतकेवली भद्रबाहु आचार्य हुए।

प्र. 667 श्रुतकेवली मुनीश्वरों के उपरान्त ग्यारह अंग और दस पूर्व ज्ञान के ज्ञाता कौन-से मुनीश्वर हुए थे ?

उत्तर ग्यारह अंग और दस पूर्व ज्ञान के ज्ञाता हुए-

1. विशाखाचार्य, 2.प्रोष्ठिल आचार्य (चन्द्रगुप्त मौर्य), 3.क्षत्रिय आचार्य (कृतिकार्य) 4.जयसेन आचार्य, 5.नागसेन आचार्य, 6.सिद्धार्थ आचार्य, 7.धृतषेण आचार्य और 8. विजयसेन आचार्य।

प्र. 668 अनेक अंगपूर्वों के ज्ञाता आचार्यों के उपरान्त अन्तिम अंगाशधर श्रुत ज्ञाता आचार्य कौन थे ?

उत्तर अन्तिम अंगाशधर श्रुतज्ञाता धरसेन आचार्य थे।

प्र.669 धरसेन आचार्य ने कौन-से सुयोग्य शिष्यों के लिए अपना ज्ञान प्रदान किया था ?

उत्तर धरसेनाचार्य से महामुनि पुष्पदन्त और महामुनि भूतबली नामक दो महान सुयोग्य शिष्यों के लिए अपना ज्ञान प्रदान किया था।

प्र. 670 पुष्पदन्त, भूतबली नामक महान आचार्यों ने प्राकृतभाषा में कौन-से महान ग्रन्थ की रचना कब की थी?

उत्तर पुष्पदन्त, भूतबली इन महान आचार्यो ने प्राकृतभाषा में षट्खण्डागम नामक महान ग्रन्थ की रचना लगभग वीर-निर्वाण संवत् 600 से 650 के बीच की थी।

प्र. 671 आचार्य कुन्दकुन्द देव ने 'षट्खण्डागम' महान ग्रन्थ पर कौन-से नाम वाली विस्तृत टीका लिखी थी?

उत्तर आचार्य कुन्दकुन्द देव ने 'षट्खण्डागम' महान ग्रन्थ पर सर्वप्रथम 'परिकर्म' नामक विशाल टीका लिखी थी।

प्र.672 आचार्य कुन्दकुन्द देव के श्री गुरुवर का शुभनाम क्या था ?

उत्तर आचार्य कुन्दकुन्द देव के श्री गुरुवर का शुभ नाम जिनचन्द्र स्वामी था। (आचार्य कुन्द-कुन्द विरचित अनेक (40) ग्रन्थों के नाम तमिल साहित्य से प्राप्त। देखिये सन्दर्भ- जैनागम संस्कार अध्याय १०, पृ. १६ पर।)

प्र. 673 षट्खण्डागम ग्रन्थ में सिद्धांत विषयक छह खण्ड कौन-से नाम वाले वर्णित हैं?

उत्तर षट्खण्डागम ग्रन्थ में 1.जीवट्ठाण, 2.खुद्दाबन्ध, 3.बन्धस्वामित्व विचय, 4.वेदना, 5.वर्गणा और 6. महाबंध नाम से छह खण्डरूप में विषय वर्णित किया गया है। (जो सोलह पुस्तकों में विभाजित है।)

प्र.674 षट्खण्डागम ग्रन्थ पर विशाल रूप धवला नामक टीका बनाने का सौभाग्य कौन महान आचार्य को प्राप्त हुआ ?

उत्तर षट्खण्डागम महान सैद्धान्तिक ग्रन्थ पर विशाल धवला नामक टीका लिखने का सौभाग्य आचार्य वीरसेन स्वामी को प्राप्त हुआ था।

प्र.675 'कषाय पाहुड़' सैद्धान्तिक महान ग्रन्थ को किन विशिष्ट आचार्यों ने कब विरचित किया था ?

उत्तर कषाय पाहुड़ इस सैद्धान्तिक महान ग्रन्थ की रचना आचार्यगुणधर, आचार्य आर्यमंक्षु व आचार्य नागहस्ति और आचार्य यतिवृषभ ने लगभग वीर-निर्वाण संवत् 500 से 660 के बीच की थी।

प्र.676 कषाय पाहुड़ महान ग्रन्थ पर कौन-से महान आचार्यों ने कितनी विशाल कौन-सी नामवाली टीका विरचित की थी?

उत्तर कषाय पाहुड़ महान ग्रन्थ पर आचार्य वीरसेन स्वामी ने 20 हजार श्लोक प्रमाण एवं उनके ही शिष्य आचार्य जिनसेन स्वामी ने गुरु समाधि के उपरान्त 40 हजार श्लोक प्रमाण 'जयधवला' नामक टीका विरचित की थी।

प्र. 677 दुषम नामक पंचम काल में श्रुततीर्थ का व्युच्छेद कब हो जावेगा ?

उत्तर इस दुषम काल में धर्म प्रवर्तक श्रुततीर्थ का व्युच्छेद 20317 वर्षों में हो जावेगा।

प्र. 678 दुषम काल में कौन-से अन्तिम मुकुटधारी राजा ने किनके चरणों में दिगम्बर मुनि दीक्षा धारण की थी ?

उत्तर दुषम काल में अन्तिम मुकुट धारी राजा सम्राट चन्द्रगुप्त ने स्वामी भद्रबाहु श्रुतकेवली के चरणों दिगम्बर मुनि दीक्षा धारण की थी।

प्र.679 पंचम (दुषम) काल में धर्म द्रोही कल्की व उपकल्की कब उत्पन्न होता है ?

उत्तर पंचम काल में पाँच सौ वर्षों में एक उपकल्की एवं एक हजार वर्ष में एक कल्की उत्पन्न होता है।

प्र.680 ऐसे धर्म द्रोही कल्की मुनियों पर किस तरह बाधा उत्पन्न करता है ?

उत्तर धर्म द्रोही कल्की मुनियों से आहार पर भी शुल्क मांगता है और अन्तराय कर निराहार लौट आते हैं।

प्र. 681 धर्म द्रोही कल्की को देवता किस तरह सबक देते हैं ?

उत्तर धर्मद्रोही कल्की को असुर जीवन से रहित कर देते हैं।

प्र. 682 ऐसे विकट समय में कल्की के प्राणान्त होने के उपरांत धर्म का संरक्षण किस तरह होता है?

उत्तर ऐसे विकट समय में अर्थात् प्रत्येक एक हजार वर्ष में एक मुनि को अवश्य रूप से अवधिज्ञान उत्पन्न हो जाता है और मुनिवर शास्त्रों का और आयतनों (जिनमंदिर आदि) के संरक्षण का उपाय बतलाते हैं।

प्र.683 इस दुषम नामक पंचम काल में अन्तिम कल्की के समय कौन-से मुनिराज अवधिज्ञान के धारक होंगे ?

उत्तर इस पंचमकाल के अंत में वीरांगज नामक मुनिराज अवधिज्ञान के धारक होंगे।

प्र.684 पंचम काल के अन्त में वीरांगज नामक मुनिराज के समय कौन-सी आर्यिका एवं श्रावक व श्राविका रहेंगी।

उत्तर वीरांगज नामक मुनिराज के समय सर्वश्री नामक आर्यिका, अग्निदत्त नामक श्रावक तथा पंगुश्री नामक श्राविका रहेंगी।

प्र.685 अन्तिम कल्की के द्वारा उपसर्ग किये जाने पर अर्थात् वीरांगज मुनि का शुल्क के रूप में ग्रास उठा लिये जाने पर चतुर्विध संघ की क्या प्रतिक्रिया होगी ?

उत्तर अन्तिम कल्की द्वारा बाधा उत्पन्न होने पर वीरांगज मुनि आदि चतुर्विधि संघ कार्तिक कृष्ण अमावस्या को सल्लेखना पूर्वक देह त्याग कर सौधर्म स्वर्ग में देव पर्याय को प्राप्त होंगे।

प्र.686 चतुर्विध संघ के समाधि मरण के दिन कौन-सी घटना घटेगी?

उत्तर उस दिन क्रोध को प्राप्त हुआ असुर देव कल्की के प्राणान्त कर देगा और सूर्यास्त के समय अग्नि विनष्ट हो जावेगी।

प्र.687 धर्मद्रोही कल्की पाप के भार से कौन-सी गति में जाकर उत्पन्न होते हैं ?

उत्तर धर्मद्रोही 21 कल्की एक सागर की आयु से युक्त होकर धर्मा नरक (प्रथम पृथ्वी रत्नप्रभा) में जाकर उत्पन्न होते हैं।

प्र.688 दुषमादुषमा नामक छठा काल कब प्रारम्भ होता है ?

उत्तर अन्तिम कल्की के पश्चात् तीन वर्ष आठ मास और एक पक्ष के बीत जाने पर महाविषम वह अतिदुषमा नामक छठा काल प्रारम्भ होता है। (छह कालों में आयु उत्सेध व आहार वर्णन देखें जैनागम संस्कार अ.13)

प्र.689 अतिदुषमा काल में मनुष्यों का शरीर किस वर्ण का होता है ?

उत्तर दुषमा-दुषमा काल में मनुष्यों का शरीर धूमवर्ण (कृष्णवर्ण) का होता है।

प्र.690 अतिदुषमा काल में मनुष्यों का आहार किस तरह का होता है ?

उत्तर ऐसे अतिदुषमा काल में मनुष्यों का आहार मूल, फल व आमिस आदिक होता है वे उसी को खाकर अपनी उदर पूर्ति करते हैं।

प्र.691 अतिदुषमा काल में क्या मनुष्य भवनों में निवास करते हैं ?

उत्तर नहीं ! ऐसे अतिदुषमा काल में मनुष्यों के लिए भवन, वृक्ष और वस्त्रादि दिखाई नहीं देते।

प्र.692 दुषमादुषमा नामक मनुष्यों को होने वाले शारीरिक दुःख कौन-से होते हैं?

उत्तर ऐसे अतिदुषमा काल में मनुष्य प्रायः पशुओं जैसा आचरण करने वाले क्रूर, बहिरे, अन्धे, काने, गूंगे दुर्गन्धित व जूँ, लीख युत केश सह रहते हैं। वे मनुष्य बन्दर जैसे रूपवाले एवं कुबड़े, बोने और व्याधि युक्त शरीर वाले होते हैं।

प्र.693 ऐसे छठे काल के मुनष्य किस स्वभाव वाले होते हैं ?

उत्तर छठे काल के मनुष्य क्रोधी, अति कषायी अति पापिष्ठ, दीन-दरिद्र और स्वजन जनों विहीन स्वभाव वाले होते हैं।

प्र.694 ऐसे छठे काल में आगमन और निर्गमन वे मनुष्य किस रूप में करते हैं।

उत्तर ऐसे छठे काल में नरक और तिर्यंच गति से आये हुए जीव यहाँ जन्म लेते हैं, तथा यहाँ से मरण कर घोर नरक व तिर्यंच गति में जन्म लेते हैं।

प्र.695 छठे काल में कौन-कौन सी हानियाँ होती चली जाती हैं?

उत्तर छठे काल में जीवों की ऊँचाई, आयु और शक्ति की हानि होती चली जाती है।

प्र.696 छठे काल के अन्त किस तरह से होता है?

उत्तर उनचास दिन कम इक्कीस हजार वर्षों के व्यतीत होने पर जीवों को भयप्रदायक घोर प्रलय काल प्रवृत्त होता है।

प्र.697 छठे काल के अन्त में प्रलय किस तरह प्रवृत्त होता है ?

उत्तर प्रलय के समय पर्वत व शिलादि को चूर्ण कर देने वाली सात दिनों तक संवर्तक वायु चलती है। वृक्ष

और पर्वतों के भंग होने से मनुष्य एवं तिर्यंच वस्त्र और स्थान की अभिलाषा करते हुए बहुत प्रकार से विलाप करते हैं। इस समय पृथक्-पृथक् संख्यात व सम्पूर्ण बहत्तर युगल गंगा-सिन्धु नदियों की वेदी और विजयार्द्धवन (व विजयार्ध पर्वत की गुफाओं) में प्रवेश करते हैं। इस समय देव और विद्याधर दयार्द्र होकर मनुष्य और तिर्यंचों में से संख्यात जीव राशि को उन सुरक्षित प्रदेशों में ले जाकर रखते हैं। उस समय गम्भीर गर्जना से सहित मेघ तुहिन और क्षार जल तथा विष जल में से प्रत्येक सात दिन तक बरसाते हैं। इसके अतिरिक्त वे मेघ के समूह धूम, धूलि वज्र एवं जलती हुई दुष्प्रेक्ष्य ज्वाला, इनमें से हर एक को सात दिन तक बरसाते हैं। उनन्चास दिनों के इस क्रम से भरत क्षेत्र के भीतर आर्य खण्ड में चित्रा पृथ्वी के ऊपर स्थित वृद्धिंगत एक योजन की भूमि जलकर नष्ट हो जाती है। वज्र और महाग्नि के बल से आर्यखण्ड की बढ़ी हुई भूमि अपने पूर्ववर्ती स्कन्ध स्वरूप को छोड़कर लोकान्त (मध्यलोकान्त) तक पहुँच जाती है। उस समय आर्य खण्ड शेष भूमियों के समान दर्पण तल के सदृश कान्ति से स्थित और धूलि एवं कीचड़ की कलुषता से रहित हो जाता है। वहां पर उपस्थित (सुरक्षित) मनुष्यों की ऊँचाई 1 हाथ, आयु 16 या 15 वर्ष प्रमाण और शक्ति आदिक तदनुसार ही होते हैं। (प्रमाण-म.पु./73/447-459, त्रि.सा./864-867)।

प्र.698 शांतिपूर्ण वातावरण के साथ उत्सर्पिणी काल का प्रारम्भ किस तरह से होता है ?

उत्तर उत्सर्पिणी काल के प्रारम्भ में सात दिनों तक पुष्कर मेघ सुखोत्पादक जल को बरसाते हैं, जिससे वज्राग्नि से जली हुई सम्पूर्ण पृथ्वी शीतल हो जाती है। क्षीर मेघ सात दिनों तक क्षीरजल वर्षाते हैं, इस प्रकार क्षीर जल से भरी हुई यह पृथ्वी उत्तम कान्ति से युक्त हो जाती है। इसके पश्चात् सात दिन तक अमृतमेघ अमृत की वर्षा करते हैं। इस प्रकार अमृत से अभिषिक्त भूमि पर लतागुल्म इत्यादि उगने लगते हैं। उस समय रसमेघ सात दिनों तक दिव्य रस की वर्षा करते हैं। इस दिव्य रस से परिपूर्ण वे सब (पदार्थ) रस वाले हो जाते हैं। विविध रसपूर्ण औषधियों से भरी हुई भूमि सुस्वाद रूप परिणत हो जाती है। पश्चात् शीतल गन्ध को ग्रहण कर वे मनुष्य और तिर्यंच विजयार्ध की गुफाओं से बाहर निकल आते हैं।

प्र.699 प्रलय समाप्ति और सुभिक्ष्य होने पर मनुष्य किस तरह आचरण करते हैं ?

उत्तर उत्सर्पिणी काल के प्रारम्भ में मनुष्य पशुओं जैसा आचरण करते हुए क्षुधित होकर वृक्षों के फल मूल व पत्ते इत्यादि का सेवन करते हैं।

प्र.700 युग का प्रारम्भ किस काल में होता है?

उत्तर उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी रूप युग का प्रारम्भ श्रावण कृष्णा पड़िवा के दिन रुद्र मुहूर्त्त के रहते हुए सूर्य का शुभ उदय होने पर अभिजित नक्षत्र के प्रथम योग में युग का प्रारंभ होता है।

प्र.701 उत्सर्पिणी काल सम्बन्धी दुषमा दुषमा काल में जीवों की उन्नति किस तरह से होती है?

उत्तर उत्सर्पिणी काल सम्बन्धी दुषमा दुषमा नामक प्रथम काल के प्रारम्भ में शरीर की ऊँचाई एक हाथ

प्रमाण होती है। इसके आगे तेज, बल, बुद्धि आदि सब काल स्वभाव से उत्तरोत्तर बढ़ते जाते हैं।

प्र.702 उत्सर्पिणी काल के दुषम नामक दूसरे काल में मनुष्यों की अवस्था किस तरह की होती है ?

उत्तर दुषम नामक दूसरे काल के प्रारम्भ में मनुष्यों का शरीर की ऊँचाई 3 हाथ प्रमाण होती है। इस काल में 20,000 वर्ष बीतने के उपरांत 1 हजार वर्ष शेष रहने पर 14 कुलकरों की उत्पत्ति होने लगती है। कुलकर म्लेक्ष सदृश लोगों के लिए न्यायनीति का उपदेश देते हैं।

प्र.703 उत्सर्पिणी काल के दुषम सुषमा नामक तृतीय काल में मनुष्यों की क्या अवस्था होती है ?

उत्तर उत्सर्पिणी काल सम्बन्धी दुषम सुषमा नामक तृतीय काल के प्रारम्भ में शरीर की ऊँचाई सात हाथ प्रमाण होती है। मनुष्य पाँच वर्ण वाले शरीर से युक्त, मर्यादा, विनय एवं लज्जा से सहित सन्तुष्ट और सम्पन्न होते हैं। इस काल में 24 तीर्थंकर होते हैं। उनके समय में 12 चक्रवर्ती, 9 बलदेव, 9 नारायण और नौ प्रतिनारायण रूप 63 श्लाका पुरुष क्रमशः उत्पन्न होते हैं। इस काल के अन्त में मनुष्यों के शरीर की ऊँचाई पाँच सौ पच्चीस धनुष प्रमाण होती है।

प्र.704 उत्सर्पिणी काल सम्बन्धी सुषमादुषमा, सुषमा, सुषमासुषमा नामक काल के मनुष्य व तिर्यंचों के शरीर भोग इत्यादिक किस प्रकार होते हैं ?

उत्तर उत्सर्पिणी काल सम्बन्धी सुषमा दुषमा, सुषमा, सुषमासुषमा चतुर्थ, पंचम एवं छठे काल जीवों के शरीरादि अवसर्पिणी काल सम्बन्धी जघन्य, मध्यम एवं उत्कृष्ट भोगभूमि सदृश हुआ करते हैं परन्तु अन्तर केवल इतना ही है कि यहाँ उत्सर्पिणी काल में जघन्य से उत्कृष्ट की ओर शरीरादिक वृद्धि को प्राप्त होते हैं।

प्र.705 भोगभूमि के जीव मरणोपरान्त किस गति में उत्पन्न होते हैं ?

उत्तर भोगभूमि के मिथ्यादृष्टि मनुष्य और तिर्यंच मरणोपरान्त भवनत्रिक (भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिष्क) देवों में उत्पन्न होते हैं तथा समयग्दृष्टि मनुष्य व तिर्यंच सौधर्म और ऐशान स्वर्ग के देवों में उत्पन्न होते हैं।

प्र.706 कुभोगभूमियाँ कहाँ स्थित हैं ?

उत्तर लवण समुद्र के भीतरी चारों दिशाओं में चार द्वीप, चार विदिशाओं में चार द्वीप और आठ अन्तर दिशाओं में आठ द्वीप, हिमवान पर्वत (कुलाचल), भरत सम्बन्धी विजयार्ध पर्वत, शिखरी कुलाचल और ऐरावत सम्बन्धी विजयार्ध पर्वत, इन चारों पर्वतों के दोनों अन्तिम भागों के निकट एक-एक अर्थात् आठ द्वीप हैं। इस तरह लवण समुद्र के अभ्यन्तर तट के कुल द्वीपों की संख्या (4+4+8+8=24) 24 है। इसके बाह्य तट पर भी 24 द्वीप हैं, अतः लवण समुद्र सम्बन्धी 48 द्वीप होते हैं। इसी तरह कालोदधि समुद्र के दोनों तटों के 48 द्वीप हैं। कुल मिलाकर 96 संख्या रूप द्वीपों में कुभोगभूमि की रचना है।

प्र.707 कुभोग भूमि में मनुष्यों के जन्मादिक किस तरह होते हैं ?

उत्तर कुभोग भूमि में मनुष्यों के जन्मादिक जघन्य भोगभूमि सदृश होते हैं तथा आयु का प्रमाण एक पल्योपम है।

प्र.708 कुभोग भूमि के जीवों का आहार किस तरह का होता है ?

उत्तर कुभोगभूमि के जीवों का आहार कल्पवृक्षों के फल, अमृतमयतृण व मधुर मिट्टी होता है।

प्र.709 भोग भूमि में जाकर कौन-से जीव जन्मधारण करते हैं ?

उत्तर मिथ्यात्व भाव से सहित होते हुए भी मन्द कषायी, अष्ट मूलगुण पालक, जिनपूजक, निर्ग्रन्थों को दान देने वाले भोग भूमि में उत्पन्न होते हैं। तथा कितने ही जीव मिथ्यात्व के साथ मनुष्य आयु का बंध कर पश्चात् सम्यग्दर्शन या तीर्थंकर के पाद मूल में क्षायिक सम्यग्दर्शन प्राप्त ऐसे बद्धायुष्क सम्यग्दृष्टि जीव भोगभूमि जन्म लेते हैं। बद्धायुष्क सम्यग्दृष्टि तिर्यंच अथवा दान की अनुमोदना करने वाले तिर्यञ्च जीव भी भोग-भूमि में उत्पन्न होते हैं।

प्र.710 कुभोग में कौन-से जीव जन्म धारण करते हैं ?

उत्तर मिथ्यात्व सह जिनभेष धारण कर माया प्रवृत्ति करने वाले, धर्म की अवज्ञा करने वाले, ज्योतिष एवं मंत्रादि विद्याओं द्वारा आजीविका करने वाले, धनलोलुपी, तीन गारव (रस, ऋद्धि और शारीरिक शक्ति का अभिमान) धारण करने वाले, चार संज्ञाओं (आहार, भय, मैथुन और परिग्रह) में सदा संलग्न रहने वाले, गृहस्थों के विवाह व आरम्भ सारम्भ के कार्य कराने वाले, अपने दोषों का अपरिमार्जन वाले, पर जनों पर दोष लगाने वाले, पंचाग्नि तप तपने वाले, मौन भंगकर आहार करने वाले, दुर्भावना रखने वाले, अपवित्रता से रहने वाले, सूतक वालों से एवं रजस्वला स्त्री के स्पर्श से युक्त तथा नीच गौत्रीय सम्बन्ध से युक्त रहने वाले, सदोष दान तथा कुपात्रों को दान देने वाले जीव मरण कर कुभोग भूमि में जन्म धारण करते हैं।

प्र.711 कुभोग भूमि में मनुष्यों का आकार कैसा होता है ?

उत्तर कुभोग भूमि के मनुष्यों की आकृतियाँ विभिन्न प्रकार की होती हैं। कोई मनुष्य एक टांग वाले, कोई पूँछ वाले, कोई लम्बे कान वाले (जिस कान को ओढ़कर वे शयन भी कर सकते हैं), किन्हीं मनुष्यों के मुख हाथी, गाय और मेढ़ा के आकार वाले भी होते हैं।

प्र.712 मध्यलोक (मनुष्य लोक एवं तिर्यग्लोक) में कितने अकृत्रिम जिनालय हैं ?

उत्तर मध्यलोक में मनुष्य लोक सम्बन्धी 398, तथा मनुष्य लोक से आगे तिर्यक् लोक सम्बन्धी नन्दीश्वर द्वीप में 52, कुण्डलगिरि पर 4 और रुचक गिरि पर 4 इस तरह 60 अकृत्रिम जिनालय (चैत्यालय) हैं। मध्यलोक में कुल अकृत्रिम जिनालयों की संख्या (398 + 60)=458 है।

प्र.713 मध्यलोक में किस-किस पर्वत पर कितने-कितने अकृत्रिम जिनालय हैं ?

उत्तर	सुदर्शन मेरु के चार वनों में	16	अकृत्रिम जिनालय
	छह कुलाचल पर्वतों पर	6	अकृत्रिम जिनालय

चौतीस विजयार्ध पर्वतों पर	34	अकृत्रिम जिनालय (32 उपविदेह, 1 भरत, 1 ऐरावत)
चार गजदन्त पर्वतों	4	अकृत्रिम जिनालय
जम्बू, शाल्मलि दो वृक्षों पर	2	अकृत्रिम जिनालय
सोलह वक्षार पर्वतों पर	16	अकृत्रिम जिनालय
जम्बूद्वीप सम्बन्धी एक मेरु आदि में कुल]-	78	अकृत्रिम जिनालय

इसी तरह धातकीखण्ड द्वीप के दो मेरु आदि सम्बन्धी तथा पुष्करार्धद्वीप के दो मेरु आदि सम्बन्धी मिलाकर कुल 78 × 5 = 390 अकृत्रिम जिनालय होते हैं।

पंच मेरु आदि सम्बन्धी	390	अकृत्रिम जिनालय
चार इष्वाकार पर्वतों के	4	अकृत्रिम जिनालय
मानुषोत्तर पर्वत के	4	अकृत्रिम जिनालय
नन्दीश्वर द्वीप के	52	अकृत्रिम जिनालय
कुण्डलगिरि के	4	अकृत्रिम जिनालय
रुचकगिरि के	4	अकृत्रिम जिनालय

मध्यलोक सम्बन्धी कुल-458 अकृत्रिम जिनालय होते हैं।

[पञ्च मेरु पर्वत एवं पञ्च मेरु पर्वत के अकृत्रिम जिनालयों के स्वरूप का वर्णन देखिये इसी ग्रन्थ के प्रश्न 132 से प्रश्न 157 तक]

प्र.714 कुलाचल पर्वत कहाँ स्थित हैं एवं वहाँ अकृत्रिम जिनालय किस तरह स्थित हैं ?

उत्तर ढाई द्वीप में भरत, हेमवत आदि सात क्षेत्रों के विभाजन करने वाले पूर्व से पश्चिम तक लम्बे हिमवान, महाहिमवान, निषध, नील, रुक्मि और शिखरी नामक पर्वत इस ढाई द्वीप (जम्बूद्वीप, धातकी खण्ड द्वीप और पुष्करार्ध द्वीप) में कुल 30 कुलाचल रूप पर्वत हैं जिन पर्वतों के पूर्व दिशा के कूट पर एक-एक जिनायतन रूप अकृत्रिम चैत्यालय स्थित है। [विजयार्ध का विशेष वर्णन एक कूट पर स्थित जिनालय का वर्णन देखें प्रश्न क्र. 635 से 643 पर]

प्र.715 विजयार्ध इस नाम की सार्थकता क्या है ?

उत्तर विजयार्ध नाम पर्वतों से चक्रवर्ती की षट्खण्डों में से तीन खण्ड तक पहुँच कर अर्ध विजय की सूचना मिल जाती है अतः अर्ध विजय का सूचक विजयार्ध पर्वत कहा जाता है।

प्र.716 ढाई द्वीप में कितने विजयार्ध पर्वत हैं और वे कहाँ स्थित हैं?

उत्तर ढाई द्वीप में पाँच भरत, पाँच ऐरावत तथा एक सौ साठ विदेह क्षेत्रों में कुल 170 विजयार्ध पर्वत हैं और जिनके पूर्व दिशा स्थित एक-एक कूट (सिद्धकूट) पर एक-एक अकृत्रिम जिनालय स्थित हैं।

प्र.717 पांच म्लेच्छ खण्डों में एवं विजयार्ध पर्वत पर काल परिवर्तन का क्या नियम होता है ?

उत्तर पांच म्लेच्छ खण्डों में एवं विजयार्ध पर्वत पर मात्र दुषमासुषमा काल के आदि और अंत की तरह काल परिवर्तन चलता रहता है।

प्र.718 गजदन्त पर्वत कहाँ हैं और उन पर्वतों पर अकृत्रिम जिनालय किस तरह स्थित हैं?

उत्तर मेरु पर्वत की विदिशाओं में हाथी दन्त के आकार वाले, शाश्वत, तिरछे रूप से आयताकार, क्रमशः रजत, तप्तस्वर्ण, स्वर्ण और वैडूर्यमणि के वर्ण वाले सौमनस, विद्युत्प्रभ, गन्धमादन और माल्यवान नामक महारमणीय चार महापर्वत हैं। जिन चारों पर्वतों के ऊपर प्रथम सिद्धायतन कूट हैं जिन पर अकृत्रिम जिनालय स्थित हैं। इसी तरह की चार और मेरु पर्वतों की रचना जानना चाहिए।

प्र.719 जम्बू वृक्ष कहाँ है और उस अकृत्रिम वृक्ष पर अकृत्रिम जिनालय किस तरह स्थित है ?

उत्तर नील कुलाचल (पर्वत) के निकट, सीता नदी के पूर्व तट पर सुदर्शन मेरु की ईशान दिशा में उत्तर कुरु क्षेत्र में जम्बूवृक्ष स्थित है। जिसके स्कन्ध से ऊपर वज्रमय अर्धयोजन चौड़ी और आठ योजन लम्बी उसकी चार शाखाएँ हैं। जिस वृक्ष की जो शाखा उत्तरकुरु गत नील कुलाचल की ओर गई है, उस पर अकृत्रिम जिन मंदिर शोभायमान है।

प्र.720 शाल्मली वृक्ष कहाँ है एवं उस अकृत्रिम वृक्ष पर अकृत्रिम जिनालय किस तरह स्थित है ?

उत्तर जम्बू वृक्ष की भाँति सीतोदा नदी के तट पर, निषध कुलाचल के समीप, सुदर्शन मेरु की नैऋत्य दिशा में देवकुरु क्षेत्र में शाल्मली वृक्ष स्थित है। शाल्मली वृक्ष की दक्षिण शाखा पर अकृत्रिम जिनालय सुशोभित है। (इसी तरह शुभनाम वाले दो-दो वृक्ष धातकी खण्ड और पुष्करार्ध द्वीप में भी पाये जाते हैं।)

प्र.721 बक्षार पर्वत कहा पर हैं और उन अकृत्रिम पर्वतों पर अकृत्रिम जिनालय किस तरह स्थित हैं ?

उत्तर पूर्व व पश्चिम विदेह में सीता व सीतोदा नदी के दोनों तटों पर उत्तर-दक्षिण लम्बायमान, चार-चार संख्या में कुल 26 बक्षार पर्वत हैं। वे पर्वत एक ओर निषध और नील पर्वतों को स्पर्श करते हैं और दूसरी ओर सीता व सीतोदा नदियों को प्रत्येक बक्षार पर्वतों के चार-चार कूटों में से नदी की तरफ वाले प्रथम कूट पर अकृत्रिम सिद्धायतन जिनालय स्थित हैं, शेष कूटों पर व्यन्तर देवों के निवास हैं (इसी तरह धातकी खण्ड द्वीप में 32 बक्षार पर्वतों पर 32 तथा पुष्करार्ध द्वीप में भी 32 बक्षार पर्वतों पर 32 अकृत्रिम जिनालय स्थित हैं।)

प्र.722 विदेह क्षेत्र में किन अशुभ स्थितियों का अभाव होता है ?

उत्तर विदेह क्षेत्र में दुर्भिक्ष नहीं होता, अतिवृष्टि, अनावृष्टि, मूषक शलभ (टिड्डी), शुक, स्वचक्र और परचक्र उपद्रव (स्व-पर नीति पीड़ा) रूप सात इतियाँ नहीं होती, महामारी नहीं होती तथा विदेह क्षेत्र में कुदेव, कुलिंग और कुमत नहीं होते।

प्र.723 विदेह क्षेत्रों में किस तरह के विशिष्ट वातावरण का सद्भाव रहता है ?

उत्तर विदेह क्षेत्रों में केवलज्ञानियों, तीर्थंकर आदिक शलाका पुरुषों और ऋद्धि सम्पन्न साधुओं का सदा

सद्भाव रहता है। प्रत्येक विदेह क्षेत्र में यदि पृथक्-पृथक् एक-एक तीर्थंकर, चक्रवर्ती और अर्धचक्रवर्ती अर्थात् नारायण और प्रतिनारायण हों तो अधिक से अधिक एक सौ साठ हो सकते हैं अथवा जघन्य रूप से मात्र बीस ही होते हैं।

प्र.724 इष्वाकार पर्वत कहाँ है और अकृत्रिम पर्वतों पर अकृत्रिम जिनालय किस तरह स्थित हैं?

उत्तर धातकीखण्ड द्वीप की उत्तर व दक्षिण दिशा में लम्बायमान दो इष्वाकार पर्वत हैं, जिनसे यह द्वीप पूर्व व पश्चिम रूप दो भागों में विभक्त हो जाता है। दोनों पर्वतों पर चार-चार कूट हैं। जिन कूटों में प्रथम कूट पर अकृत्रिम जिनालय स्थित हैं, शेष कूटों पर व्यन्तरों के निवास हैं। इसी तरह के इष्वाकार पर्वतों पर जिनालयों की रचना पुष्करार्ध द्वीप में जानना चाहिए।

प्र.725 मानुषोत्तर पर्वत कहाँ है और उस अकृत्रिम पर्वत पर कहाँ, किस तरह अकृत्रिम जिनालय स्थित हैं ?

उत्तर पुष्करवर द्वीप के मध्य में स्वर्णमयी मानुषोत्तर पर्वत है उस अकृत्रिम मानुषोत्तर पर्वत पर नैऋत्य और वायव्य इन दो दिशाओं को छोड़कर अवशेष छह दिशाओं में पंक्ति स्वरूप तीन-तीन कूट हैं तथा उन कूटों के अभ्यन्तर अर्थात् मनुष्यलोक की ओर चार दिशाओं में चार जिन मंदिर रूप अकृत्रिम जिनालय सुशोभित होते हैं।

प्र.726 नंदीश्वर द्वीप कहाँ पर है और उस द्वीप में अकृत्रिम जिनालय किस तरह स्थित हैं।

उत्तर इस मध्यलोक में एक सौ तिरेसठ करोड़ चौरासी लाख योजन प्रमाण विस्तार वाला अष्टम द्वीप नंदीश्वर द्वीप है जिसकी चारों दिशाओं में एक-एक अंजनगिरि है। यह पर्वत 1000 योजन गहरा, 84,000 योजन ऊँचा और 84,000 योजन प्रमाण विस्तार युक्त समवृत्त है। अंजनगिरि की चारों दिशाओं में एक-एक लाख योजन विस्तार वाली चार-चार वापिकाएँ (जलाशय) हैं। वापियों के बहु मध्य भाग में दही के सदृश वर्णवाला 1000 योजन गहरा, 10,000 योजन ऊँचा और 10,000 योजन प्रमाण विस्तार वाला गोल एक-एक दधिमुख पर्वत है, वापियों के दोनों बाह्य कोनों पर दो-दो रतिकर पर्वत हैं जो 250 योजन गहरे, 1000 योजन ऊँचे और 1000 योजन विस्तार वाले गोल हैं। इस तरह चार अंजनगिरि, सोलह दधिमुख और बत्तीस रतिकर मिलकर 52 पर्वत हैं। प्रत्येक पर्वत पर 100 योजन लम्बे, 50 योजन चौड़े एवं 75 योजन ऊँचे एक-एक अकृत्रिम जिनालय (चैत्यालय) हैं। जिनमें अष्ट प्रतिहार्य युक्त 108-108 अकृत्रिम जिन प्रतिमाएँ सुशोभित होती हैं। (क.दी.भा.3)

प्र.727 नंदीश्वर द्वीप में वहाँ कौन, कब महापूजा किया करते हैं ?

उत्तर अष्टाह्निक पर्व के समय नन्दीश्वर द्वीप में प्रत्येक दिशा के 13-13 चैत्यालयों में चारों निकाय के इन्द्र अपने परिवार के साथ अनवरत 64 प्रहर तक दो-दो प्रहर के क्रम से महापूजा किया करते हैं। (त्रि.सा.)

प्र.728 कुण्डलवर द्वीप में कुण्डलगिरि कहाँ है और उस अकृत्रिम गिरि पर अकृत्रिम जिनालय किस तरह स्थित हैं ?

उत्तर ग्यारहवें स्थान पर स्थित कुण्डलवरद्वीप अपने बहुमध्य भाग में कुण्डलाकार कुण्डलगिरि पर्वत को धारण किये हुए हैं जिस पर्वत के शिखर पर पूर्वादि चतुर्दिशाओं में चार-चार कूट हैं। उनके अभ्यन्तर भाग में अर्थात् मनुष्यलोक की तरफ एक-एक सिद्धवर कूट नामक या जिनकूट नामक कूटों पर अकृत्रिम जिनालय स्थित हैं।

प्र.729 रुचकवर द्वीप कौन-सा अकृत्रिम द्वीप है और उस द्वीप में रुचकवर गिरि कहाँ है और कहाँ अकृत्रिम जिनालय किस तरह स्थित हैं ?

उत्तर रुचकवर यह तेरहवाँ द्वीप है इस द्वीप के बहुमध्यभाग में स्वर्णमय रुचकवर पर्वत है। ऐसे रुचकगिरि के ऊपर पूर्वादि चार दिशाओं में पृथक्-पृथक् आठ-आठ कूट हैं, जिनके अभ्यन्तर की ओर चार दिशाओं में चार कूट हैं और सर्व अभ्यन्तर चार दिशाओं में चार जिनेन्द्र कूट हैं। इस तरह कुल कूट 44 हैं।

प्र.730 तीर्थकरों की जननी माँ की सेवा में करने वाली तथा तीर्थंकरों के जन्म के समय सेवा कर विशिष्ट पुण्यार्जन करने वाली देवियाँ कहाँ निवास करती हैं और वे देवियाँ ढाई द्वीप में आकर किस तरह से कब अपनी कुशलता प्रकट करती हैं ?

उत्तर रुचकगिरि के ऊपर पूर्व दिशा के आठ कूटों में जो आठ देवकुमारियाँ निवास करती हैं, ये भृङ्गार धारण कर जिन-माता की सेवा करती हैं। दक्षिण आदि दिशाओं के आठ-आठ कूटों पर निवास करने वाली आठ-आठ देवकुमारियाँ हाथ में दर्पण लेकर, तीन छत्र धारण कर एवं चंवर धारण कर क्रमशः तीर्थंकर-माता की सेवा करती हैं। अभ्यन्तर कूटों की पूर्वादिक चार दिशाओं में निवास करने वाली चार देवकुमारियाँ तीर्थंकर के जन्म-काल में सर्व दिशाओं को निर्मल करती हैं। इनके अभ्यन्तर कूटों की पूर्वादिक चार दिशाओं के भवनों में निवास करने वाली चार देव कुमारियाँ तीर्थंकर के जन्म समय में जात कर्म (गर्भशोधन) करने में कुशलता प्रकट करती हैं।

शुद्ध करके पढ़ें-

प्र.618 मध्यलोक में स्थित शुभनाम वाले असंख्यात द्वीप समुद्रों में से प्रारम्भ में स्थित सोलह द्वीप व समुद्रों के नाम कौन-से हैं ?

उत्तर जम्बूद्वीप, लवणोदधि समुद्र, धातकी खण्ड द्वीप, कालोदधि समुद्र, पुष्करवर द्वीप, पुष्करवर समुद्र, वारुणीवर द्वीप, वारुणीवर समुद्र, क्षीरवर द्वीप, क्षीरवर समुद्र, घृतवर द्वीप, घृतवर समुद्र, क्षौद्रवर द्वीप, क्षौद्रवर समुद्र, नन्दीश्वर द्वीप, नन्दीश्वर समुद्र, अरुणवर द्वीप, अरुणवर समुद्र, अरुणभासद्वीप, अरुणभास समुद्र, कुण्डलवर द्वीप, कुण्डलवर समुद्र, शंखवर द्वीप, शंखवर समुद्र, रुचकवर द्वीप, रुचकवर समुद्र, भुजगवर द्वीप, भुजगवर समुद्र, कुशवर द्वीप, कुशवर समुद्र और क्रौंचवर द्वीप तथा क्रौंचवर समुद्र इस तरह मध्य लोक में शुभ नाम वाले प्रारम्भ स्थित सोलह द्वीप-समुद्र हैं। (मूलाचार भाग 2)

सम्यग्ज्ञान-भूषण व सिद्धान्त-भूषण पदवी हेतु त्रैमासिक धार्मिक प्रश्न-पत्र

समय : 15 दिन अंक : 100

❖ 20 प्रश्नों में से प्रत्येक प्रश्न पर 5-5 अंक समान हैं। ❖ सभी प्रश्नों के उत्तर लाइन वाले पेपर्स पर पेरा बनाकर लिखें। ❖ उत्तर राष्ट्र-भाषा हिन्दी में ही लिखें। ❖ उत्तर लिखकर काटे जाने या घिसे जाने पर अंक नहीं दिये जावेंगे।

प्र.1. स्वयंप्रभ पर्वत कहाँ पर स्थित है ?
प्र. 2. कहाँ, कौन, कब नंदीश्वर द्वीप में महापूजा किया करते हैं ?
प्र. 3. स्वयंभू रमण समुद्र में कौन-से जीव पाये जाते हैं ?
प्र. 4. ढाई द्वीप के बाहर स्वयंप्रभ पर्वत तक स्थित समुद्रों में कौन से जीव होते हैं?
प्र. 5. कल्पकाल किसे कहते हैं ?
प्र. 6. युग का प्रारम्भ किस काल में होता है ?
प्र. 7. भोग भूमि के मनुष्य किस कार्य से रहित होते हैं ?
प्र. 8. दुषमा-सुषमा (वर्तमान काल) कब प्रारम्भ हुआ ?
प्र. 9. द्वादशांग के ज्ञाता पांच श्रुतकेवली कौन थे ?
प्र.10. भ. महावीर के उपरान्त हुए पंच अनुबद्ध केवली प्रभु के नाम क्या थे ?
प्र.11. अन्तिम अगांशधर श्रुत ज्ञाता कौन-से आचार्य कौन थे ?
प्र.12. भोग भूमिज मनुष्य कौन-सी कलाओं में निपुण होते हैं ?
प्र.13. पुष्पदन्त और भूतबली नामक महान आचार्यों द्वारा रचित ग्रन्थ कौन सा है ?
प्र.14. दुषमा नामक इस पंचम काल में अन्तिम अवधिज्ञानी मुनि कौन होंगे ?
प्र.15. इस पंचम काल में कौन-से अन्तिम मुकुटबद्ध राजा ने मुनि दीक्षा ली थी ?
प्र.16. विजयार्ध इस नाम की सार्थकता क्या है ?
प्र.17. म्लेच्छ खण्डों एवं विजयार्ध पर्वत पर काल परिवर्तन का क्या नियम है ?
प्र.18. विदेह क्षेत्र में कौन-सी अशुभ स्थितियों का अभाव होता है ?
प्र.19. तीर्थंकरों की एवं तीर्थंकर की माता की सेवा करने वाली देवियाँ कहाँ रहती हैं ?
प्र.20. भोग भूमि में प्राकृतिक सौन्दर्य किस तरह का होता है ?

आधार :आचार्यश्री आर्जवसागर विरचित-'**आगम-अनुयोग**', (प्रश्नोत्तर प्रदीप)
प्रश्न पत्र के पूर्व में दिये गये प्रश्नोत्तरों को पढ़कर उनका चिंतवन-मंथन कर उत्तर-पुस्तिका की पूर्ति करें।

परीक्षार्थी परिचय

नाम.. उम्र ....
पिता/माता/पति का नाम ....
पता ....
....
मोबाईल/फोन नं. ....

सम्यग्ज्ञान-भूषण एवं सिद्धांत-भूषण पदवी हेतु परीक्षार्थी के लिए नियमावली

1. उपर्युक्त पदवी हेतु परीक्षार्थी की उम्र कम-से-कम 13 वर्ष पूर्ण और अधिक-से-अधिक आंखों की दृष्टि और लेखनी के स्थिर रहने तक रहेगी।
2. परीक्षार्थी अवश्य रूप से सप्त-व्यसनों अथवा मद्य, मधु, मांस का त्यागी एवं तीर्थंकर व उनकी जिनवाणी का श्रद्धालु होना चाहिए।
3. जो महानुभाव भाव-विज्ञान पत्रिका के सदस्य हैं उन्हें परीक्षा सामग्री प्रश्नोत्तर रूप में भाव-विज्ञान पत्रिका के साथ संलग्न रूप से सतत रूप से चार वर्षों तक प्राप्त होती रहेगी।
4. चारों अनुयोगों के शास्त्रों सम्बन्धी क्रमशः प्राप्त होने वाले प्रश्नोत्तरों तथा अंत में दिये गये प्रश्न-पत्र को स्वयं पढ़कर हल करें और प्रेषित करें तथा अन्य जनों तक भी परीक्षा में भाग लेने की जानकारी अवश्य देने का पूर्ण प्रयास करें। (इस कार्य हेतु इंटरनेट का भी उपयोग कर सकते हैं।)
5. जो महानुभाव पत्रिका के सदस्य नहीं हैं उन्हें प्रश्नोत्तर रूप सामग्री प्राप्त करने हेतु डाक व्यय का भुगतान स्वतः करना होगा।
6. परीक्षार्थी के लिए यह आवश्यक होगा कि वे प्रश्नोत्तरी व प्रश्नपत्र पाते ही एक माह के अन्तर्गत साफ-सुथरे रजिस्टर के पेपर्स पर पूर्ण शुद्धता और विनयपूर्वक उत्तर लिखकर निम्नलिखित पते पर भेजने का उपक्रम करें।
7. उत्तर पुस्तिका पर अंक (नम्बर) देने का भाव उत्तर-पुस्तिका में वर्णित उत्तरों की शुद्धता और लिखावट आदि पर निर्भर करेगा।
8. परीक्षार्थी से ऑनलाइन या फोन द्वारा उत्तर पूछने की पहल भी की जा सकती है अतः अपने पते के साथ ई-मेल एड्रेस या मोबाईल/फोन नं. अवश्य लिखें।
9. उत्तर लिखकर काट दिये जाने पर या घिस दिये जाने पर अंक नहीं दिये जावेंगे।
10. परीक्षार्थी प्रश्नों के उत्तर स्वतः अपनी लिखावट में ही लिखें, अन्य किसी के नाम से उत्तर पुस्तिका भरकर प्रेषित किये जाने पर हमारे परीक्षा बोर्ड द्वारा उसे पदवी हेतु मान्य नहीं किया जावेगा।
11. कदाचित् किसी भव्य द्वारा किसी विशेष परिस्थिति में परीक्षा न दे सकने के कारण और उनके आग्रह किये जाने पर उन्हें प्रश्नोत्तरी व प्रश्नपत्र उपलब्ध कराये जाने की व्यवस्था परीक्षा-बोर्ड द्वारा की जा सकेगी।
12. सम्यग्ज्ञानभूषण एवं सिद्धांतभूषण पदवी सम्बन्धी उत्तीर्णता प्राप्त करने वाले भव्य गणों को भगवान महावीर आचरण संस्था समिति के द्वारा दो या चार वर्षों में प्रमाण पत्र सह सम्मानित किया जावेगा।
13. प्रश्नोत्तरी व प्रश्न-पत्र मंगवाने हेतु परीक्षा-बोर्ड के निम्न लिखित पदवीधारी से सम्पर्क करें:-

भाव-विज्ञान पत्रिका के	भ. महावीर आचरण संस्था	भ.महावीर आचरण संस्था
प्रधान सम्पादक	समिति के मंत्री	समिति के अध्यक्ष
डॉ. अजित जैन	श्री राजेन्द्र जैन	श्री महेन्द्र जैन
मो. 7222963457	मो. 7049004653	मो. 7999246837

14. उत्तर पुस्तिका डाक/पोस्ट से निम्न पते पर प्रेषित करें:-
    सम्पादक, भाव-विज्ञान, एम आईजी-8/4, गीतांजली कॉम्पलैक्स,
    कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल 462003 (म.प्र.)

गतांक से आगे......

प्रागैतिहासिक-प्राग्वैदिक जैन धर्म और उसके सिद्धान्त

-श्रीनाथूलालजी जैन शास्त्री

जैनधर्म और विज्ञान

वैशेषिक नैयायिक मतानुसार ''शब्द गुणकमाकाशम्'' शब्द आकाश का गुण है। जैनधर्म शब्द को मूर्तिक पुद्‌गल की पर्याय मानता है और वैशेषिक दर्शन शब्द को अमूर्तिक आकाश का गुण मानते हैं। शब्द टेलीफोन और टी.वी. द्वारा सर्वत्र आवाज रूप में फैलता है। वायरलेस द्वारा भेजा जाता है। शब्द रुकता है, फोनोग्राम द्वारा भरा जाता है। शब्द, बंध, स्थूल, सूक्ष्म, संस्थान, भेद, अंधकार, छाया, चन्द्रप्रकाश, सूर्य प्रकाश ये 10 पुद्‌गल द्रव्य की पर्यायें हैं। (तत्वार्थसूत्र एवं द्रव्यसंग्रह)

पुद्‌गल परमाणु एक समय में चौदह राजू-लोकांत एक गमन कर सकता है तथा शब्द रूप पुद्‌गल स्कंध रूप होकर दो समय में लोकांत तक गमन कर सकता है। जीव को वैज्ञानिकों ने शीशे में बंद करने का प्रयत्न किया, परन्तु सफलता नही मिली। जैनधर्म जीव को मृत्यु के पश्चात् एक गति से दूसरी गति में पहुँचने में एक, दो, तीन, चार समय और सीधा, एक मोड़, दो मोड़ और तीन मोड़ तक मानता है। जीव के साथ कार्मण और तैजस ये दो शरीर संसार दशा में हमेशा बने रहते हैं। यह गति से गत्यंतर में पहुँचना कार्मण योग से होता है। प्रत्येक आत्मा शरीर प्रमाण रहता है। जगत्कर्तृत्व युक्त्यागम से सिद्ध नहीं होता, न ही वैज्ञानिक मानते हैं।

जन्म के लिए आज माता के गर्भ की आवश्यकता नहीं रह गई परखनली से शिशु का जन्म हो जाता है। यह हम पुराणों में भी पढ़ते हैं। वैज्ञानिकों ने रोबोट अपने समान तैयार कर लिया है जो मनुष्य, मनुष्य संबंधी कार्यों को कर लेता है। वैज्ञानिक चमत्कारों को देखकर हमारी आस्था डगमगाने न लगे इस हेतु प्रस्तुत प्रयत्न है। पूर्व जन्म अब सिद्ध हो चुका है। वर्तमान विज्ञान ने अणुबम, उद्‌जनबम एवं अन्य अस्त्रों-शस्त्रों का निर्माण कर मृत्यु की सहस्र सामाग्री उत्पन्न कर दी है, जिसके लिए वैज्ञानिक आइन्स्टीन को पश्चाताप हुआ है। अब बड़े राष्ट्रों को सद्‌बुद्धि भी आई है कि वे इनके प्रयोग में प्रतिबंध रूप समझौता करने में सचेष्ट हैं।

वर्तमान विज्ञान ने आकाश में इस पृथ्वी से सूर्य को ऊपर और चन्द्र को नीचे माना है और चन्द्रयात्रा के उदाहरण भी प्रस्तुत कर दिये हैं। प्रचलन में जैन शास्त्रानुसार चन्द्र ऊपर और सूर्य नीचे है। इस विषय में जो प्राचीन गाथा है वह निम्नलिखित है-

णउदुत्तर सत्तसया दससीदी चदुदुगंतिय चउक्क।
तारा रवि ससि रिक्खा बुह भग्गव गुरु अंगिरारसणी॥ (सर्वार्थसिद्धि 4-12)

इस भूमि से 790 योजन ऊँचे तारे, उससे 10 योजन ऊपर सूर्य है। उससे 80 योजन ऊपर चन्द्र है, फिर क्रमशः 4, 4, 3, 3, 3, 3, योजन ऊँचे नक्षत्र, बुध, शुक्र, गुरु, मंगल और शनि है।

इस विषय में प्रसिद्ध विद्वान पं. महेन्द्रकुमार जी न्यायाचार्य ने पहले और अभी श्री पं. जगन्मोहनलाल जी शास्त्री ने अपने ''जैनशास्त्रों में वैज्ञानिक संकेत'' लेख में लिखा है कि लिपि लेखकों की लिखने में भूल हो सकती है कि ''ताररविससि'' के स्थान में ''तारासिरवि'' हो सकता है। इस तरह सूर्य ऊपर और चन्द्र नीचे संभावित है। उक्त गाथा भी प्राचीन है जिसका उल्लेख पूज्यपाद आदि आचार्यों ने किया

है। सामान्यत: चन्द्रलोक यात्रा आगम विरुद्ध नहीं है, क्योंकि ऋद्धिधारी साधु सुमेरु के चैत्यालयों की वन्दना करते हैं। तीर्थंकरों का देवों द्वारा सुमेरु-पांडुक वन पर अभिषेक होता है, जो ज्योतिर्लोक (900 योजन ऊँचा) से ऊपर है।

जैनधर्म में जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल ये छः द्रव्य माने गये हैं। इनमें आकाश, धर्म और अधर्म तत्त्व हैं, ऐसा आधुनिक वैज्ञानिक मानने लगे हैं। आकाश स्पेस का पर्यायवाची है। आकाश असीम है किन्तु अनंत है। इसे अंग्रेजी में ''फाइनाइट बट अनवाउन्डेड'' शब्दों द्वारा प्रगट किया गया है। आइन्स्टाइन ने आकाश (स्पेस) को ससीम प्रकृति के निमित्त से कहा है। प्रकृति (पुद्गल) के अभाव में आकाश (असीम)अनंत है। धर्म द्रव्य का पर्यायवाची ईथर है। यह पौद्गलिक नहीं है। यह सम्पूर्ण जगत् में व्याप्त है और गति का माध्यम है। यह माइकेल्सन मार्ले-प्रयोग और सापेक्षवाद के सिद्धांत के अनुसार है। अधर्म क्षेत्र फिल्ड का पर्यायवाची है। यह स्थिति का माध्यम है। गुरुत्वाकर्षण प्रकाश और अन्य विद्युत चुंबकीय घटनाओं से संबंद्ध है। अत: इसका माध्यम क्षेत्र है। इस ओर वैज्ञानिक ध्यान दे रहे हैं।

वैशेषिक पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और मन ये पृथक् द्रव्य मानते हैं। उनके नव द्रव्यों में ये शामिल हैं। वर्तमान विज्ञान ने इन पांचों को एक जाति प्रकृति या पुद्गल में शामिल किया है जैसा कि जैनशास्त्र सर्वार्थसिद्धि पंचमाध्याय में पहले ही सिद्ध कर दिया गया था। ये चारों जिन परमाणुओं से निर्मित हैं, उनकी जाति एक ही है। वैज्ञानिक वायु में स्पर्श ही नहीं, रूप भी मानते हैं। ये तरल अवस्था में वायु का रंग हल्का नीला होता है। उसी प्रकार अग्नि ऊर्जा के अन्तर्गत है। वैज्ञानिक ऊर्जा और प्रकृति (पुद्गल) को एक मानते हैं। वैज्ञानिक प्रकृति को ठोस, तरल और वाति रूप मानते हैं। जल भी इसी के अन्तर्गत है। हाइड्रोजन और ऑक्सीजन वात मिलकर जल बन जाती है। यह हम जानते ही हैं। चकमक पाषाण से अग्नि निकलती है। यह भी सर्वविदित है। द्रव्य मन तो हृदय के भीतर अत्यन्त सूक्ष्म कमलाकार पुद्गल स्कंध रूप है ही किन्तु भाव मन (क्रोधादि भाव) के चित्र खींचे जाने लगे हैं। अत: यह भी पुद्गल के अर्न्तगत है। उक्त पाँचों एकेन्द्रिय (स्पर्शन व स्थावर) जीव हैं। इन में डॉ. जगदीशचन्द्र वसु ने पेड़ों में अनेक प्रयोगों से जीव सिद्ध किया था। पेड़ों को काटने से दु:ख का अनुभव होता है। वे सांस लेते हैं। यह सब जैन धर्म मानता है। शेष एकेन्द्रिय तो स्पष्ट रूप से सजीव एवं निर्जीव हैं। पहाड़ों की चट्टानों और खानों को बढ़ते अनुभव किया जा चुका है।

क्या पृथ्वी घूमती है ?- जैन आगम बाइबिल, कुरान, वेद आदि में पृथ्वी को स्थिर और सूर्य आदि को भ्रमण करते हुए माना है। ज्योतिष और गणित के विकास का युग आने पर इस विषय में विभिन्न तर्क उपस्थित किये गये। इसी के फलस्वरूप पृथ्वी को चल और सूर्यादि को स्थिर मानने वाले आर्यभट्ट (सन् 476) आदि तथा पृथ्वी को स्थिर एवं सूर्यादि को चर मानने वाले वराहमिहिर (सन् 505) आदि गणितज्ञ हुए। इस विषय में जैन आचार्य विद्यानंद जी ने श्लोक वार्तिक अ.4 में भू-भ्रमण का निषेध किया है। दोनों ओर से अनेक युक्तियाँ दी गईं हैं। हेनरी फाल्टर एवं एडगल ने पृथ्वी को चपटी सिद्ध किया है। मेकडोनल्ड ने पृथ्वी को थाली के आकार का माना (जैन धर्म ऐसा ही मानता है।) किन्तु लिखा है कि पृथ्वी धूमती है। पृथ्वी को गतिशील मानने से ध्रुव तारा एक जगह स्थिर नहीं रह सकता। सूर्य प्रतिदिन पूर्व से उदित होकर पश्चिम में अस्त होता रहे यह भू-भ्रमण

से संभव नहीं। ''वायुयान आदि वायुमंडल के साथ स्वाभाविक गति करते रहते हैं।'' यह विचार भू-भ्रमणवादियों का समाधान योग्य नहीं है। वायुयान या पक्षी एक हजार मील प्रति घण्टा व 66000 मील की दैनिक व वार्षिक गति से पृथ्वी का साथ नहीं दे सकते। इस प्रकार भू-भ्रमण की सिद्धि नहीं हो पाती। जो हवाई जहाज तीव्र वेग से चल रहा है, उस पर हम लोग बैठ कर हवा का प्रतिकूल दबाब अनुभव करते हैं। उसी तरह जो पृथ्वी अनंत आकाश में वायुयान की तरह स्वयं उड़ रही हो तो वैसा अनुभव क्यों नहीं होता ? यदि हमें स्थिर रखने वाला न्यूटन का गुरुत्वाकर्षण होता तो भी वायु के वेग और खिंचाव अनुभव में अवश्य आना चाहिए। विज्ञान का मत है कि (विज्ञान) किसी भी एकांत निर्णय को स्वीकार नहीं करता। सतत् अन्वेषण तो चलता ही रहता है। इस पृथ्वी की गति एवं स्थिरता के दो मत के समाधान हेतु वैज्ञानिक आइन्स्टीन ने अपना सापेक्ष दृष्टिकोण उपस्थित किया है। उनकी मान्यता है कि प्रकृति ऐसी है कि किसी भी ग्रह की वास्तविक गति किसी भी प्रयोग से निश्चित नहीं बताई जा सकती। सूर्य की अपेक्षा पृथ्वी भ्रमण करती है या पृथ्वी की अपेक्षा सूर्य चलता है, तीसरी बात गणित संबंधी कठिनाइयों को दूर कर सुविधाएँ प्राप्ति हेतु सूर्य के स्थिर एवं पृथ्वी के चल की मान्यता है। प्राचीन व्यवस्था में पृथ्वी केन्द्र है और चन्द्र आदि अपनी-अपनी कक्ष पर घूमते हैं। पृथ्वी 1000 मील प्रति घण्टा से घूमती हुई 12 घण्टे के बाद पृथ्वी का एक भाग दूसरी ओर हो जावेगा अर्थात् 8000 मील पर बदल जायेगा। इस तरह 8000 मील की दूरी से हमें ध्रुवतारा जैसे का तैसा दिखलाई पड़े यह संभव नहीं।

परमाणु- पुद्गल के सबसे छोटे अविभागी अंश को परमाणु कहते हैं। इसमें रूप (वर्ण) एक, गंध एक, रस एक और स्पर्श दो इस प्रकार 5 गुण पाये जाते हैं। स्पर्श दो में स्निग्ध या रुक्ष में से एक एवं शीत या उष्ण में कोई एक। जैन धर्मानुसार कोई भी परमाणु कालांतर में भी परमाणु के सदृश विसदृश हो सकता है। यही विज्ञान भी मानने लगा है। एक समय में परमाणु की उत्कृष्ट गति लोकांत (14 राजू) तक व अल्पतम आकाश के एक प्रदेश से पास के दूसरे प्रदेश पर पहुँचने तक है। आकाश के प्रदेश पर स्थित परमाणु प्रदेश के समान है। आकाश प्रदेश में एक परमाणु भी रहता है और अनंत प्रदेशी स्कंध भी रह सकता है। यह परमाणुओं की व प्रदेश की शक्ति का प्रभाव है। वैज्ञानिक दृष्टि से ही स्थूल-स्थूल (पृथ्वी) स्थूल (जल-तेल) स्थूल-सूक्ष्म (छाया-आतप) सूक्ष्म-स्थूल (स्पर्श, रस, गंध, शब्द) सूक्ष्म (मनो-कर्म) सूक्ष्म-सूक्ष्म (परमाणु) व स्कंधापेक्षया द्विप्रदेशी स्कंधा यूनान के सर्वप्रथम वैज्ञानिक डेयोक्रेटस (ई.पू. 490) ने परमाणु पर प्रकाश डाला जबकि उससे पहले ही परमाणु पर जैनधर्म में परमाणु की मान्यता बनी हुई है। विज्ञान का परमाणु कितना सूक्ष्म है, पचास शंख परमाणुओं का भार केवल ढाई तोला लगभग है, जिसका व्यास एक इंच का दस करोड़वाँ हिस्सा है। धूलि में एक छोटे कण में दस पद्म से अधिक परमाणु होते हैं। यह सब जैन धर्मानुसार स्कंध पर विवेचन है। आज इलेक्ट्रान सूक्ष्मतम कण माना जाता है। वह भी स्कंध है। दो से लेकर अनंत परमाणुओं के मिलने पर स्कंध होता है।

टेलीविजन- पुद्गल पर्याय के 10 भेदों में छाया भी है। विश्व के प्रत्येक मूर्त पदार्थ से प्रतिक्षण तदाकर प्रतिछाया निकलती है। वह आगे चारों ओर बढ़कर सारे विश्व में फैलती है जहाँ उससे प्रभावित पदार्थों का संयोग होता है, वहाँ यह प्रभावित होती है। यथादर्पण, तेल, जल आदि। इसी सिद्धांत के आधार पर टेलीविजन का अविष्कार हुआ है। यह एक स्थान से बोलने वाले व्यक्ति का चित्र समुद्रों पार दूसरे स्थान में प्रगट होता है।

जैसे रेडियो यंत्र गृहीत शब्दों को विद्युत प्रवाह से सहस्रों मील दूर प्रगट करता है, वैसे ही टी.वी. भी प्रसरणशील प्रतिछाया को ग्रहण कर उसे विशेष प्रयत्नों से प्रवाहित कर हजारों मील से प्रकट करता है।

अणुबम एवं उद्जनबम- पुद्गल का अर्थ है पूरणगलन। वैज्ञानिक खोज से जब पौद्गलिक शक्ति का चमत्कार दृष्टिगोचर होने लगा तो पूर्ण अर्थात् संयोग और गलन अर्थात् वियोग / हाइड्रोजन पूरण धर्म का उदाहरण है। इसमें चार परमाणुओं का संयोग होता है जिससे टेलियम परमाणु बनता है। इसकी जो शक्ति है वह हाइड्रोजन बम है। यूरेनियम के परमाणु समूह के वियोग (टूटना या गलन) से एटम बम बनता है। फ्यूजन एवं फीजन इन बमों के नाम से भी क्रमशः यही अर्थ निकलता है। अणु शक्ति का क्या प्रभाव है, इसे हम तेजोलेश्या के उदाहरण से भी जान सकते हैं। तेजोलेश्या (पौद्गलिक) प्राप्त करने वाले साधु की शारीरिक उष्मा प्रकट होकर बाहर के पुद्गलों को प्रकाशित कर देती है। यह एक रासायनिक प्रक्रिया है क्योंकि बेला (दो उपवास), हाथों को ऊपर कर सूर्य का ताप सहना, एक चुल्लू उष्ण जलपान, एक मुट्ठी उड़द के छिलकों का भोजन आदि तपस्या की कई विधियाँ हैं।

वर्तमान विज्ञान ने इलेक्ट्रॉन एवं प्रोटॉन ये दो अणु माने हैं। परमाणु को एक प्रदेशी और अणु को सूक्ष्म स्कंध माना है। प्रोटॉन स्निग्ध तथा इलेक्ट्रॉन सूक्ष्म है। समगुण वाले अणु हटते हैं और असमान वाले आकर्षित होते हैं। समान योन 2-4-6-8-10 आदि और असमान वाले 3-5-7-9-11 आदि। यह नियम तत्त्वार्थसूत्र पंचम अध्याय के सूत्र ''द्वयधिकादिगुणानां'' से जान सकते हैं। स्निग्ध-सूक्ष्म का, स्निग्ध-स्निग्ध, रुक्ष-रुक्ष का परस्पर बंध होता है। किन्तु दो अधिक का।

बंध मोक्ष- जैनधर्म के बंध और मोक्ष तत्त्व को हम रसायन शास्त्र द्वारा समझ सकते हैं। संसारी जीव और कर्म और नोकर्म पुद्गल, सोना, चाँदी, तांबा पीतल धातुओं के मिश्रण से निर्मित अंगूठी, चूड़ी व हार के समान मिश्रित या संश्लेष रूप बने हुए हैं, जिन्हें पृथक् रासायनिक प्रक्रिया से किया जाता है।

उक्त प्रक्रिया दशलक्षण धर्म के संयम, तप, त्याग, आकिंचन्य और ब्रह्मचर्य अंगों से जान सकते हैं। जिस प्रकार सराफा बाजार में धातु मिश्रित चूड़ी और अंगूठी (सुवर्ण की) जो सर्राफ जांचकर उसमें से शुद्ध सुवर्ण अलग कर देता है अर्थात् आग की भट्टी में, भूसी में रखकर चर्म की धोंकनी से हवा देते हैं। वह हवा उस वस्तु पर केन्द्रित होती है और नीचे अग्नि प्रज्वलित होकर उसे द्रवित कर समस्त मिश्रित धातुओं से सुवर्ण को भिन्न कर देती हैं। उस सुवर्ण की ढाली बनाकर ग्राहक को दे दी जाती है। इस प्रक्रिया को क्रमशः संयम (वायु का एकत्रित होना)तप (उष्णता पैदा करना) त्याग (अन्य धातुओं का पृथक् होना) आकिंचन्य (केवल सुवर्ण का रह जाना) ब्रह्मचर्य (शुद्ध पीत सुवर्ण का अपने स्वरूप में लीन होना) यही प्रक्रिया परधातु-कर्म नोकर्म पुद्गल (शरीरादि) से आत्मा को पृथक् कर ब्रह्मचर्य याने परमात्मत्व रूप शुद्धावस्था प्राप्त करने की विधि है।

जैन धर्म

जिसने अपने रागद्वेष काममोह आदि विकारों को जीत लिया है वह जिन कहलाता है। जिन को अपना देव मानने वाले जैन कहलाते हैं। उनके धर्म को जैनधर्म कहते हैं।

जो जिन बनते हैं वे हम प्राणियों में से ही बनते हैं। प्रत्येक जीवात्मा अपने पुरुषार्थ से परमात्मा बन

सकता है। जिन ही जिनेन्द्र या जिनराज हैं, जिन्हें परमात्मा, परमेश्वर या भगवान कहते हैं। यदि वे विश्व के समस्त प्राणियों के कल्याण की कामना करते हैं और तीर्थंकर नाम कर्म का बंधकर तीर्थंकर बनते हैं तो तीर्थंकर पर्याय में जन्म लेकर मुनि दीक्षा लेकर तपस्या द्वारा आत्मा में विद्यमान चार अनंत घाति कर्म को नाश कर अनंतज्ञान, दर्शन, सुख और वीर्य इन चार गुणों को प्राप्तकर अर्हंत केवलज्ञानी सर्वज्ञ वीतराग परमात्मा कहलाते हैं और समवसरण (धर्मसभा) द्वारा जीवों को धर्म का उपदेश देकर सन्मार्ग दिखलाते हैं अपनी आयु के अंत में शेष अघाति कर्म आयु, नाम, गोत्र, वेदनीय इनका नाश कर सिद्ध (मुक्त) परमात्मा बन जाते हैं। ये सब जिनेन्द्र कहलाते हैं। जिन यह किसी व्यक्ति विशेष का नाम नहीं है। णमोकार मंत्र में भी किसी व्यक्ति का नाम नहीं है जैसा विष्णु से वैष्णव या शिव से शैव आदि धर्म प्रसिद्ध हैं।

'जिन'; सिद्ध, अर्हंत, आचार्य, उपाध्याय और सर्वसाधु में सबगुण वाचक हैं। इन नामों के अर्थ अनुसार जिनमें जो गुण हैं, उन्हें उसी से संबोधित किया जाता है और उनकी मान्यता होती है। जैनधर्म की विशेषता यह है कि वह आत्मा से परमात्मा बनने का धर्म है। इस धर्म के अनुसार संसार के समस्त चेतन अचेतन पदार्थ अनादि से उत्पाद, व्यय और ध्रौव्य स्वरूप हैं, कोई उनको उत्पन्न करने या सुख-दुःख देने वाला ईश्वर नहीं है। इसका अभिप्राय यह नहीं है कि जैनधर्म नास्तिक है। नास्तिक है वह जो परमात्मा, जीव, पुण्य, पाप, स्वर्ग, नरक, जन्म, मरण नहीं मानता। किन्तु जैनधर्म इन सब को मानता है।

धर्म का स्वरूप रत्नत्रय (रयणत्तयंच धम्मो) अर्थात् सदृष्टि ज्ञान वृत्तानि धर्म (रत्नकरण्ड श्रा.) सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र धर्म है यही मोक्षमार्ग है।

जैनधर्म वैज्ञानिक धर्म है। यहाँ अंध श्रद्धा को स्थान नहीं है। इसके दर्शन का लक्ष्य यही है कि सर्वप्रथम यह जाने कि मैं कौन हूँ ? मेरा क्या स्वरूप है ? यह संसार क्या है ? मैं क्यों दुःखी हूँ ? सुख क्या है ? वह मुझे कैसे प्राप्त हो सकता है ? इन सब प्रश्नों का उत्तर भलीभाँति जान कर अपने समीचीन लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए पुरुषार्थ करना यह जैन दर्शन का प्रयोजन है। वह प्रयोजन सम्यक् श्रद्धा, ज्ञान और चारित्र से सिद्ध हो सकता है। यह रत्नत्रय ही समस्त प्रश्नों का उत्तर है। इसके स्वरूप को जान लेने से सभी प्रश्न हल हो जाते हैं। इस समाधान से ही जैनधर्म के स्वरूप को भलीभाँति समझा जा सकता है। इसका विस्तार जीव-अजीव, आश्रव, बंध, संवर, निर्जरा और मोक्ष ये सात तत्त्व हैं। इन्हें जानना चाहिए। 'तत्त्वार्थसूत्र' जैनधर्म को जानने हेतु सर्वोत्तम ग्रंथ है।

जैन समाज

हमारा समाज भारतीय संस्कृति के प्रति पूर्ण आस्थावान है। हमारी मान्यता है कि इस संस्कृति के उदात्त तत्त्व संसार को वर्तमान संकट से रक्षा कर सकते हैं। वीतराग तीर्थंकरों और आचार्यों ने मनुष्य मात्र के कल्याण का मार्गदर्शन किया है। जिनके चरणों में बैठने वालों ने 'क्षेमं सर्व प्रजानां' लिखा, न कि किसी जाति का सम्प्रदाय विशेष को लेकर उपदेश दिया। जो क्षेत्रीय, जातिय, प्रांतीय विचारों से ऊपर होकर मनुष्य के लिए सोचते थे। जैन शब्द जाति परक नहीं है, किन्तु धर्म परक है। वीतराग 'जिन' का अनुयायी जैन है। अहिंसा से वह सदा प्रेम करता आया है। युद्ध और हिंसा को उसने कभी नहीं चाहा। राष्ट्र की संस्कृति, मंदिर, कृषि,

सतीत्व और सम्पत्ति एवं सम्पत्ति को नष्ट करने वाले आक्रान्ताओं को रोकने हेतु बलिदान देने को वे सदा तत्पर रहे हैं। अहिंसा विश्व धर्म है और संसार की श्रेष्ठतम संस्कृति है जहाँ विश्व के प्रत्येक त्रस स्थावर तक पर करुणाभाव है। ऐसा है यह समाज। भारत के सभी स्थानों में जैन बसे हुए हैं। उनकी कोई अलग वेशभूषा व अलग भाषा नहीं है। वे अपने चरित्र और आस्था के कारण व्यसन मुक्त हैं और ईमानदार हैं। शिक्षा, औद्योगिक, सामाजिक आदि क्षेत्रों में जनसंख्या के अनुपात की दृष्टि से जैनों का योगदान उल्लेखनीय है। इस बात को 'जैनसमाज का वृहद इतिहास जयपुर' प्रमाणित कर रहा है। इसी के प्राक्कथन रूप शुभाशीर्वाद में राष्ट्र संत पूरम पूज्य आचार्यश्री विद्यानन्द जी ने लिखा है कि–

'हड़प्पा और मोहनजोदड़ों के उत्खनन से कायोत्सर्ग मुद्रा में जैन योगियों की सीलें उपलब्ध होने के कारण इतिहास यह स्वीकार करने लगे हैं कि सिन्धु सभ्यता के उत्कर्ष काल में जैनधर्म विद्यमान था, जबकि वैदिक धर्म का भारत में प्रवेश भी नहीं हुआ था। सिंधुघाटी से दो देवताओं की मूर्तियाँ प्राप्त हुई थीं, ऋषभदेव और शिव की। लिंगपुराण ऋषभदेव जी को शिव का अवतार कहता है, तो श्रीमद्‌भागवत–ऋषभ को जैन धर्म का प्रवर्तक बताता है। इन तथ्यों से ऋषभदेव भारत के आदि देवता है और जैनधर्म भारत का आदि धर्म है। अत: जैन ही भारत के मूल निवासी हैं। जैनधर्म का प्रचार–प्रसार गृहत्यागी जैनाचार्यों ने किया। वह अपने गौरव के साथ आज भी विद्यमान है, जबकि बौद्धधर्म भारत में लुप्त प्राय: हो गया। जैन धर्म अहिंसात्मक आचार के कारण जैनों की प्रमुख पहचान है। जैन मूलत: भारतीय हैं। जो राष्ट्रीय आकांक्षाएं हैं वे ही उनकी आकांक्षाएं हैं। जैनों की अपनी कोई पृथक् आकांक्षाएँ नहीं हैं। जैनों का दृष्टिकोण 'बहुजन हिताय' है। जैन समाज दानी समाज के रूप में प्रसिद्ध है। उसके दान से देश में अनेक सेवाभावी संस्थाएँ चल रही हैं। जैनों ने कभी अन्य धर्मों के धर्म स्थानों पर अधिकार नहीं किया। जैन समाज शाकाहारी समाज है। समाज में आर्थिक दृष्टि से सभी परिस्थिति के लोग हैं।

भारत में अन्य अल्प संख्यक धर्मानुयायियों के समान जैन भी अल्प संख्यक श्रेणियों में हैं अत: उनके पृथक् धार्मिक आचरण और सिद्धांत आदि की दृष्टि से उन्हें अल्पसंख्यक दर्जा प्राप्त करने को न्यायोचित अधिकार है। इसे अवशिष्ट प्रांतीय सरकारों के साथ केन्द्र से भी प्राप्त करने हेतु प्रयत्न किया जा रहा है। (वर्तमान में हो चुका हैं)

राजस्थान में मंत्री आदि अनेक ऊँचे पदों पर सैकड़ों वर्षों तक अधिक जैनी ही रहे हैं। उन्होंने अहिंसा धर्म को निभाते हुए वीरता के ऐसे अनेक कार्य किये हैं जिनसे इस देश की प्राचीनता की उत्तमता की रक्षा हुई। उन्होंने देश की आपत्ति के समय महान सेवायें कीं।

(महामहोपाध्याय रा.व. गौरीशंकर हीराचंद ओझा)

जैनधर्म के सिद्धांत अहिंसावाद

प्राणीमात्र को जीवन प्रिय है। सब सुख चाहते हैं, दु:ख से डरते हैं। किसी को मारना, शारीरिक या मानसिक कष्ट पहुँचाना अनुचित है। मैत्री, करुणा, सहयोग आदि अहिंसा के अंग हैं। विश्व का सर्वसम्मत लोक कल्याणक धर्म अहिंसा है। किसी ने प्रश्न किया–

जले जन्तुः स्थले जन्तुः आकाशे जन्तुरेव च।
जन्तु मालाकुले लोके कथं भिक्षुरहिंसकः॥

जल में जीव हैं, स्थल में जीव हैं और आकाश में जीव हैं। संसार ही जीवों से व्याप्त है। ऐसी स्थिति में कोई भी साधु अहिंसक कैसे रह सकता है? प्रश्न महत्व का है। इसमें जीवों के प्राणनाश की दृष्टि है। इसका समाधान करते हुए वीतरागी साधु ने कहा–

अघ्नन्नपि भवेत्पापी निघ्नन्नपि न पापभाक्।
परिणाम विशेषेण यथा धीवर कर्षकौ॥

मछली मारने वाला धीवर प्रातः काल से सायंकाल तक नदी में जाल डालकर इसी प्रतीक्षा में बैठा मछली फँसने का विचार करता रहता है। परन्तु उसके जाल में एक भी मछली नहीं आती। उधर किसान, जो प्राण रक्षा निमित्त हल चलाता है, उसमें जीवों की हिंसा भी होती है। फिर भी वह हिंसा का भागी नहीं होता, क्योंकि उसके भाव जीवों को मारने के नहीं हैं। उसका उद्देश्य तो खेत में बीज बोकर अपने और दूसरों की भूख शांत करने के लिए अन्न पैदा करना है। उधर मछुवारा मछली मारकर उसका मांस खाने और खिलाने के लिए उसके भावों में हिंसा व्याप्त है। अतः किसान हिंसा का भागी नहीं, किन्तु धीवर हिंसा रूप पाप का भागी है। हिंसा अहिंसा में भावों की ही प्रधानता है। कहा है–

परिणाममेव कारणमाहुः खलु पुण्य पापयोः प्राज्ञाः।
तस्मात् पापापचयः पुण्योपचयश्च सुविधेयः॥

बुद्धिमान पुरुषों ने भाव मात्र को पुण्य और पाप का कारण माना है। इसलिए पाप की हानि एवं पुण्य का संचय करना चाहिए। अपने विचार को शुभ रखने से पुण्य और अशुभ रखने से पाप कर्म का बंध होता है।

हिंसा–अहिंसा का स्वरूप–

अप्रादुर्भावः खलु रागादीनां भवत्यहिंसेति।
तेषामेवोत्पत्तिर्हिंसेति जिन प्रवचनज्ञा॥

(पुरुषार्थ सिद्धयुपाय)

मन में रागद्वेष आदि भावों का न होना अहिंसा है और रागद्वेषादि भावों का होना हिंसा है। यही संक्षेप में जैनधर्म का सार है।

तत्त्वार्थसूत्र में भी यही बताया है–

प्रमत्त योगात्प्राण व्यपरोपणं हिंसा

रागद्वेष रूप कषाय के वशीभूत होकर अपने या दूसरों के भाव या द्रव्य प्राणों का नाश करना हिंसा है। मन में रागद्वेष भाव पैदा होते हैं तो पहले अपने समता भावों का नाश होता है जो हिंसा का ही रूप है, फिर दूसरे का अहित चाहने पर उस की हिंसा हो या न हो, यह उसके पुण्य–पाप पर निर्भर है अतः रागद्वेष भावों से हिंसा का भागी तो वह हो गया। यह हिंसा की भावना स्वयं करने कराने और अनुमोदना करने से बराबर पाप का भागी होता है।

हिंसा के 4 भेद हैंः-

1. संकल्पी 2. आरंभी 3 उद्योगी 4. विरोधी

1. संकल्पी- जानबूझ कर दो इन्द्रिय से पंचेन्द्रिय तक के प्राणियों की हिंसा-वध करना, शिकार करना, धनसम्पत्ति हरण करने को मनुष्यों की हत्या करना।

2. आरम्भी- गृह संबंधी कार्यों, चलने फिरने, भोजन बनाने आदि क्रियाओं में होने वाली हिंसा।

3. उद्योगी- कृषि, व्यापार, धंधे, आदि में होने वाली हिंसा।

4. विरोधी- अपने परिवार, धर्मायतन व राष्ट्र की रक्षार्थ में होने वाली हिंसा।

इनमें से गृहस्थ केवल संकल्पी हिंसा का त्यागी होता है। शेष तीन हिंसा उसे मजबूरन करनी पड़ती हैं। इन्हें सावधानी से करना उसका कर्त्तव्य है। साधु तो उक्त सभी हिंसाओं का मन, वचन, काय, कृत, कारित, अनुमोदना से त्याग करते हैं। गृहस्थ संकल्पी को छोड़कर अपने जीवन के निर्वाह एवं रक्षा हेतु शेष तीन हिंसाओं का त्याग नहीं कर सकता।

श्रीराम-लक्ष्मण को सीता की रक्षा हेतु युद्ध में शस्त्र ग्रहण कर लाखों प्राणियों की हिंसा करके अपने कर्त्तव्य का पालन करना पड़ा जो उचित था। यह भी ध्यान रखा जावे कि कायरता और क्रूरता दोनों हिंसा में गर्भित हैं। क्षमा करना वीरों का भूषण है, कायरों का नहीं।

अहिंसा का अभिप्राय यह है किसी को कष्ट न दिया जावे, किसी का हृदय नहीं दुखाया जावे, दुःखी जनों का कष्ट दूर करें, भूखों को अन्न, प्यासों को पानी, रोगी को रोग मुक्त करें, अज्ञानी को ज्ञान प्रदान करें, परोपकार, दान, सेवा ये सब अहिंसा के अंग हैं। असहयोग (अहिंसक) आंदोलन या सत्याग्रह द्वारा ही सन् 1921 से 1947 तक केवल 26 वर्ष में महात्मा गाँधी ने भारत वर्ष की परतंत्रता को दूर करने में सफलता प्राप्त की, यह अहिंसा की विजय का प्रत्यक्ष उदाहरण है।

वर्तमान में विश्व शांति का बहुत बड़ा प्रश्न है। क्या युद्ध से विश्व शांति संभव है? पूर्व इतिहास हमें बतलाता है कि पहले न्याय पूर्वक युद्ध होते थे दोनों पक्ष अपनी जय पराजय स्वीकार कर लेते थे। आजकल के वैज्ञानिक युद्धों में उचित अनुचित का कोई विचार नहीं किया जाता वर्तमान संहारक बमों से क्षणभर में नगर के नगर वीरान हो सकते हैं। झूठ, जालसाजी, मिथ्या प्रचार की कोई सीमा नहीं। इसलिए ऐसे विनाशकारी युद्धों को रोकना अनिवार्य है। सर्वप्रथम सद्भाव और उदारता के साथ अपनी सीमा को न्यायपूर्वक समझना चाहिए। परस्पर विश्वास के साथ भय की आशंका को दूर कर देना आवश्यक है जो शक्ति संपन्न राष्ट्र हैं उन्हें मध्यस्थ बनकर दोनों ओर से होने वाली प्रच्छन्न युद्ध की तैयारियों को रोक देना चाहिए। उन्हें व्यापारिक लाभ हेतु शस्त्रास्त्र एवं आर्थिक सहयोग नहीं दिया जावे।

भारत की जो निष्पक्ष नीति रही है उसका अनुकरण किया जावे। अविश्वास, अभिमान, शोषण, बेईमानी ये सब हिंसा के कार्य हैं। इनके रहते हुए युद्ध से शांति स्थापित होना असंभव है। युद्ध के द्वारा शांति स्थापित नहीं हो सकती। शांति के लिए अहिंसा को ही प्रमुख साधन मानने पर विश्व शांति हो सकेगी।

निरन्तर.....

आर्जव जीवन गान

रचयिता- महेन्द्रकुमार जैन "शाश्वत"

भारत देश के इक बालक ने, तपसी बनने की ठानी।
लिख दी गीतकार शाश्वत ने, उस बालक की अमर कहानी ॥

1. मध्यप्रदेश के जिला-दमोह में, ग्राम-फुटेराकलां बसा।
श्री शिखरचन्द्र-माया बाई का, इक परिवार वहाँ रहता।
कर्म से शिक्षक-धर्म के रक्षक, शिखरचन्द्र जी कहलाते।
स्वयं संस्कारों की मूरत जो, ज्ञानी गुणी कहे जाते।
माया देवी-धर्म ध्यान में , पीछे नहीं किसी से थीं।
धर्ममूर्ति-सद्ज्ञान की देवी, सौम्यमूर्ति वो महिला थीं।
ग्यारह सितम्बर-सन् सरसठ में, महापर्व दशलक्षण का।
महापर्व की तिथि अष्टमी, बालक जन्म विलक्षण था।
शिखरचन्द्र जी खुशी से नाचे, पुत्र रतन पा वरदानी।
लिख दी गीतकार शाश्वत ने उस बालक की अमर कहानी ॥

2. नामकरण का समय जो आया, पण्डित जी को बुला लिया।
शोध पत्तरा पंडित जी ने, उसको पारस नाम दिया।
इक पारस ने शिखर पे चढ़के, तपसी बन मुक्ति पाई।
इक पारस से शिखर के घर में, जन्म से बाजी आज बधाई।
पारस क्रमशः दो भाई अरु, एक बहिन भी पाये थे।
छोटा सा परिवार था उनका, सुख समृद्धि सब पाये थे।
माता-पिता संस्कार-वान हों, तो संतान हो संस्कारी।
बच्चे हों जो धर्म-परायण, मात-पिता हो सुखकारी।
मात-पिता ज्ञानी हो जिनके, बच्चे होते हैं ज्ञानी।
लिख दी गीतकार शाश्वत ने उस बालक की अमर कहानी ॥

3. बी.ए. प्रथम वर्ष तक शिक्षा, पारस में ग्रहण करके।
आचार्यश्री की शरण गही फिर, ग्राम पनागर जा करके।
गुरु चरणों में किया निवेदन, गुरुवर ब्रह्मचर्य व्रत दो।
अपना शिष्य बनाकर मुझको, मम जीवन कृत-कृत कर दो।
देख भावना गुरु पारस की, ब्रह्मचर्य व्रत दे डाला।
सत्रह साल की उमर में पारस, घर परिवार को है त्यागा।

उन्निस-बारह-चौरासी सन् में, संयम यात्रा प्रारंभ हुई।
आठ नवम्बर सन् था पिचासी, क्षुल्लक दीक्षा पारस ली।
क्षुल्लक जी को आर्जवसागर, नाम दिया गुरुवर ज्ञानी।
लिख दी गीतकार शाश्वत ने उस बालक की अमर कहानी॥

4. क्षुल्लक दीक्षा आहार क्षेत्र में, ऐलक दीक्षा ली थूबोन जी।
संयम यात्रा की पारस फिर, चढ़ते गये सीढ़ी दर सीढ़ी।
दस जुलाई उन्निस सौ सतासी, थूवोन जी का प्रांगण था।
ऐलक दीक्षा पा आर्जव का, मन अन्दर से हर्षित था।
जहाँ विहार होता गुरुवर का, संग चलते आर्जवसागर।
गुरु उपदेश से भरते रहते, नित-प्रति ही अपनी गागर।
थूवोन जी कर विहार फिर, आचार्यश्री का संघ चला।
झाँसी से दतिया होकर के, क्षेत्र सोनागिर पहुँच गया।
सोनागिर है क्षेत्र मनोहर, जहाँ रुके गुरुवर ज्ञानी।
लिख दी गीतकार शाश्वत ने उस बालक की अमर कहानी॥

5. सोनागिर जी के पर्वत पर, हैं प्राचीन सत्तर मंदिर।
उनमें से सत्तावन नंबर में, चन्द्र प्रभु का जिन मंदिर।
उसी जिनालय क्षेत्र परिसर में, इक सुंदर पाण्डाल सजा।
क्योंकि आठ मुनि दीक्षाओं का, आज सुहाना अवसर था।
आर्जव-उत्तम-पवित्र-प्रमाण-मार्दव-सुख-चिन्मय-पावन।
सभी आठ दीक्षार्थी मिलकर, आचार्यश्री की गही शरण।
सब दीक्षार्थी केशलोंच कर, दीक्षा को तैयार हुये।
सभी के सिर पै बनाके स्वास्तिक, गुरुवर ने संस्कार दिये।
बाल-ब्रह्मचारी थे सब ही, दीक्षित किये जो गुरु ज्ञानी।
लिख दी गीतकार शाश्वत ने उस बालक की अमर कहानी॥

6. इक्तिस मार्च-अठासी सन् में, आर्जव मुनि दीक्षा धारी।
चन्द्रप्रभु अष्टम तीर्थंकर, अष्ट मुनीश बने त्यागी।
सोनागिर से ललितपुर को, आचार्यश्री ने किया विहार।
मौन साधना करने का फिर, आर्जवसागर किया विचार।
नमन किया आचार्य प्रवर को, गुरुवर मुझको दें आशीष।
एक वर्ष तक मौन साधना, करना चाहूँ गुरु मनीष।
गुरु आज्ञा ले आर्जवसागर, मौनी बाबा बन भगवान्।
आर्जव मुनि की मौन साधना, देख सभी ने किया प्रणाम।

मौन साधना-समता पूर्वक, करते रहे आर्जव ज्ञानी।
लिख दी गीतकार शाश्वत ने उस बालक की अमर कहानी॥

7. महावीर जयन्ती-सन् था अठासी, मढ़ियाजी तक मौन लिया।
महावीर जयन्ती-सन् था नवासी, आर्जव मौन को पूर्ण किया।
सन् चौरासी से नब्बे तक मुनि, आर्जव गुरु के साथ रहे।
इकानवे सन् में गुरु आशी पा, क्षेत्र दर्श के भाव किये।
दक्षिण भारत को बढ़े कदम तो, उत्तर भारत भूले आप।
पहला कोपर गाँव कीना दूसरा-वर्षावास साँगली आप।
अहिंसा संस्कार उपदेश दीना, मिथ्यातम-तम की की हानी।
ज्ञानवर्धक शिविर करवाये, साहित्य रचना की ठानी।
लिख दी गीतकार शाश्वत ने उस बालक की अमर कहानी॥

8. कर विहार फिर श्रवणबेल को, पहुँच गये आर्जव मुनिराज।
श्रवण बेल गोला जाकर के, किया है आर्जव चातुर्मास।
योग-स्वभाव-सुख-पवित्र भी, हरदम रहते थे उनके पास।
संघ साथ ले वहाँ विराजे, वर्द्धमान सागर महाराज।
रयण-पुण्य-हित सागर जी भी, पहुँचे करने को चातुर्मास।
संघ आर्यिका-मुनि संघ सब, श्रवणबेलगोला में वास।
महामस्तकाभिषेक का अवसर, गोम्मटेश के बाहुबली।
संघ सभी मिलकर करते थे, बाहुबली की भक्ति भली।
गोम्मटेश के बाहुबली की, महिमा सबने ही जानी।
लिख दी गीतकार शाश्वत ने उस बालक की अमर कहानी॥

9. भारत देश के राष्ट्रपति श्री, शंकर दयाल वहाँ आये।
सी.एम. वीर मोहली के संग, पी.एम. देवगौड़ा आये।
महामस्तकाभिषेक कार्यक्रम, चातुर्मास में हुआ विशेष।
चातुर्मास ये तिरानवै सन् का, मुनि आर्जव का शाश्वत लेख।
सम्मेद ऊर्जयन्त कर मुनिवर, तेरह प्रदेश में किया विहार।
आचार्यपद की ओर चलें अब, लम्बा न करके विस्तार।
इंदौर नगर जा पहुँचे आर्जव, आचार्यश्री सीमन्धर पास।
आर्जव को जब लखा गुरु ने, उनमें मन में जागी आस।
फिर आर्जव को पास बिठाकर, कहने लगे गुरुवर ज्ञानी।
लिख दी गीतकार शाश्वत ने उस बालक की अमर कहानी॥

10. समाधिमरण कराओ मेरा, हुयी सल्लेखना बारह साल।
अन्तिम समय निकट है मेरा, जीवन मेरा करो निहाल।
निर्यापक आज्ञा पालन को, आर्जव गुरु की शरण गही।
आचार्यश्री सीमन्धर जी ने, आर्जव को निज पदवी दी।
माघ शुक्ल-षष्ठी तिथि अरु, दो हजार पन्द्रह सन् था।
पद आचार्य मिला आर्जव को, इंदौर नगर का प्रांगण था।
मुनि से आर्जव ऐसे बन गये, आचार्यश्री आर्जवसागर।
नगर-नगर हर गली गाँव में, छलकाते जो निज गागर।
मुख्य अंश आर्जव जीवन के, लेकर लिक्खी गई कहानी।
लिख दी गीतकार शाश्वत ने उस बालक की अमर कहानी॥

11. गुरु आशीष मिला जो मुझको, कर में कलम सम्हाली है।
ग्यारह छन्दों की यह रचना, पारस की लिख डाली है।
अक्षर मात्रा अरु शब्दों का, मुझको तो कोई ज्ञान नहीं।
अतः क्षमा माँगने में कोई, समझूँगा मैं अपमान नहीं।
जो भी त्रुटियाँ हो रचना में, उनका वो सुधी सुधार करें।
कवि 'शाश्वत' तो अज्ञानी हैं, बुधिजन करुणा भाव धरें।
पारस से आर्जव बनने की, यह रचना तो सम्पूर्ण हुई।
थोड़ा लिखा बहुत समझे गुरु, मम मंशा अभी न पूर्ण हुई।
कलम रोकता है अब 'शाश्वत' हो गई है सम्पूर्ण कहानी।
लिख दी गीतकार शाश्वत ने उस बालक की अमर कहानी।
'भारत देश के इक बालक ने, तपसी बनने की ठानी।
लिख दी गीतकार शाश्वत ने उस बालक की अमर कहानी॥'

मुक्तक

''शास्त्रों की परिभाषा से, अनजान है ये, 'शाश्वत'।
गीतों और मुक्तकों की, पहिचान है ये 'शाश्वत'।
आपकी नजर में 'शाश्वत' क्या है ? आप ही जानें।
अपनी नजर में तो- माँ सरस्वती का वरदान है ये 'शाश्वत'।''

आचार्यश्री विद्यासागर जी महाराज के कर कमलों से दीक्षित आचार्यगुरुवरश्री 108 आर्जवसागरजी के जीवन पर आधारित रचना 18 सितम्बर 2020 को संपूर्ण हुई।

-गुरसराय-झाँसी (उ.प्र.)

भ.पार्श्वनाथ एवं अभिनन्दननाथ जिनालय, अ.क्षे. क्षेत्रपाल, ललितपुर (उ.प्र.) में अपूर्व प्रभावना सानन्द संपन्न हुआ षोडशकरण व दशलक्षण महापर्व

अध्यात्म योगी प.पू. आचार्यश्री गुरुवर श्री 108 आर्जवसागर जी महाराज ससंघ के मंगल सान्निध्य में श्री पार्श्वनाथ दि.जैन मंदिर, क्षेत्रपाल, ललितपुर में चल रहे चातुर्मास में आचार्यश्री के मंगल आशीर्वाद से अनेक लोगों ने षोडशकारण व्रत किए। ललितपुर नगर के अलावा अन्य स्थानों के लोगों ने भी षोडसकारण व्रत करने का आशीर्वाद प्राप्त किया। षोडशकारण महापर्व के अवसर पर प्रतिदिन सायंकाल की बेला में गुरुभक्ति उपरांत आचार्यश्री द्वारा 'तीर्थोदय काव्य' का पाठ भी कराया गया एवं सोलह भावनाओं का वर्णन भी सुनने का लोगों को अवसर प्राप्त हुआ।

दिनाँक 23/08/2020 से पर्वराज पयूर्षण पर्व का आरंभ हुआ, जिसमें 23/08/2020 से 01/09/2020 तक प्रतिदिन प्रातः जिनाभिषेक, शान्तिधारा, पूजन की गई। पश्चात् प्रात: 8:00 बजे से आचार्यश्री की मांगलिक पूजन, चित्रानावरण, द्वीप प्रज्ज्वलन उपरांत तत्त्वार्थ सूत्र के दस अध्यायों का वाचन किया गया। इसके पश्चात् आचार्य गुरुदेव के मुखारबिंद से दस धर्मों पर आधारित मांगलिक प्रवचन सुनने का लाभ का अवसर प्राप्त हुआ। दोपहर 2 बजे से संघस्थ मुनिश्री 108 विलोकसागरजी महाराज से द्रव्यसंग्रह की कक्षा सुनने का भी लाभ लोगों को प्राप्त हुआ। एवं दोप. 3:00 बजे से आचार्यश्री द्वारा तत्त्वार्थ सूत्र के दस अध्यायों का विस्तार पूर्वक वर्णन किया गया। इन दस अध्यायों के वर्णन में आचार्यश्री ने लोगों को बहुत कम समय में, गागर में सागर रूप तत्त्व के सार को समझाया। सायंकाल 05:30 बजे से प्रतिक्रमण उपरांत गुरुभक्ति एवं धर्मभावना शतक व तीर्थोदय काव्य का वर्णन सुनने का अवसर मिला। पश्चात् प्रश्न मंच भी किया गया।

इसी दशलक्षण पर्व के बीच 'भाद्र शुक्ल अष्टमी' को आचार्यश्री आजर्वसागरजी गुरुदेव के अवतरण दिवस पर गुरुवर की विशेष पूजन की गई एवं शास्त्र दान किया गया और बाहुबली नगर से आयी आर्जव प्रतिभा प्रभावना मण्डल द्वारा मंगलाचरण किया गया। पश्चात् आचार्यश्री के मांगलिक प्रवचन संपन्न हुये। अनंत चतुर्दशी के दिन वर्ष भर का प्रतिक्रमण कराया गया एवं क्षमावाणी पर्व के दिन भी सभी ने आपस में क्षमावाणी मनाई एवं क्षमावणी पर्व पर आचार्यश्री के विशेष प्रवचन हुये तथा पर्व दिनों में दस उपवास एवं षोडसकारण व्रत करने वालों का सम्मान कमेटी के पदाधिकारियों द्वारा प्रतीक चिह्न एवं गुरु चित्र देकर किया गया।

ऑनलाइन मंगलाचरण प्रतियोगिता का हुआ आयोजन-

सुधाकलश भक्तामर महिला मण्डल ललितपुर द्वारा दशलक्षण पर्व में ऑनलाइन मंगलाचरण प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। जिसमें देश-विदेश के अनेक लोगों नें भाग लिया। सभी ने देव-शास्त्र-गुरु, ऐसे इन तीन विषयों पर बहुत ही सुंदर-सुंदर प्रस्तुतियाँ भेजीं। इसमें प्रतियोगियों को तीन वर्गों में बाँटा गया। प्रथम वर्ग में 8 वर्ष तक की उम्र वालों में प्रथम स्थान अरुषि अनिल जैन जबलपुर; द्वितीय स्थान भव्यांशी आलोक सिंघई रहली एवं सुवीर विवेक जैन ललितपुर एवं तृतीय स्थान तपस्या मनया, यमिश, श्रेयांश, योषिता, हिंताशी जैन ललितपुर ने प्राप्त किया। द्वितीय वर्ग में 9 से 15 वर्ष तक उम्र वालों में प्रथम भुवि शैलेन्द्र जैन

रहली, द्वितीय स्थान शौर्य रीतेश जैन व आदि राजीव जैन ललितपुर; तृतीय स्थान लाभांशी नायक सागर, आर्या संदीप भोपाल, प्रेषिता पंकज कवड़े एलोरा (महाराष्ट्र), प्रीषा पीयूष भोपाल व अनामिका अभिषेक जैन फुटेरा कलाँ ने प्राप्त किया। तृतीय वर्ग में 16 वर्ष से ऊपर की उम्र वालों में प्रथम स्थान अश्विनी प्रकाश कुमार कांसल पुणे, एवं द्वितीय स्थान राहुल जयकुमार ललितपुर तथा निधि-जिनेन्द्र, ललितपुर एवं तृतीय स्थान शैली पथरिया, अपर्णा दमोह, अवनि दोशी दुबई, पलक बीनागंज, पूनम ललितपुर ने प्राप्त किया।

दिनाँक 06/09/2020, दिन रविवार, को ऑनलाइन मंगलाचरण प्रतियोगिता के विजेताओं को पुरस्कृत किया गया। एवं बाहर के विजेताओं तक भी उनके पुरुस्कार को भेजने की व्यवस्था की गई। इस प्रकार ललितपुर नगर में प्रथम बार ऐसी धार्मिक प्रतियोगिता का कार्यक्रम सानंद संपन्न हुआ।

दशलक्षण पर्व के उपरांत प्रतिदिन आचार्यश्री द्वारा सम्यक् ध्यान शतक के साथ-साथ विभिन्न ग्रन्थों पर आधारित कक्षाओं को सुनने का लाभ भी श्रद्धालुओं को प्राप्त हुआ। जिसमें इष्टोपदेश, द्रव्यसंग्रह, समाधितन्त्र, प्रश्नोत्तर रत्नमालिका आदि ग्रन्थों का स्वाध्याय कराया गया। एवं सायंकाल गुरुभक्ति उपरांत आचार्य गुरुवर द्वारा (बारहभावना, तीर्थ क्षेत्र, परमेष्ठी आदि विषयों पर) ध्यान भी कराया गया।

आचार्यश्री के सान्निध्य में संपन्न हुई सल्लेखना-

आचार्य गुरुवरश्री 108 आर्जवसागर जी महाराज ससंघ के मंगल सान्निध्य एवं मंगल आशीर्वाद से भ. पार्श्वनाथ अ.क्षे. क्षेत्रपाल, ललितपुर में श्रीमति विद्या बाई जी (ब्र.मीना दीदी की माँ) की सल्लेखना उल्लास पूर्वक संपन्न हुई। 30/09/2020 को इन्होंने सप्त प्रतिमा पश्चात् गुरुदेव आर्जवसागरजी महाराज से दशमी प्रतिमा के व्रत धारण किये। आचार्यश्री ने इनका नाम 'विरतमति' रखा। दशम् प्रतिमाधारी विरतमतिजी को गुरुदेव ससंघ का मंगल आशीर्वाद प्रतिदिन सुबह व सायंकाल मिलता रहा। इन्होंने समस्त घर-परिग्रह का त्याग कर अपनी सल्लेखना की साधना यहीं अ.क्षे. क्षेत्रपाल में आचार्यश्री के सान्निध्य में की। दिनाँक 02/10/2020 को इन्होंने अन्न का आजीवन त्याग किया। इसके बाद अत्यल्प मात्रा में मात्र जल ही ग्रहण किया। पश्चात् 09/10/2020 को इन्होंने जल का भी त्याग कर उपवास ग्रहण किया। 10/10/2020 को समता पूर्वक इनकी समाधि पूर्ण हुई और इन्होंने अपने इस जीवन को धन्य बनाया तथा उत्तम गति को प्राप्त किया।

आर्यिका संघ का चातुर्मास जीवन में लाया हर्षोल्लास

अत्यन्त हर्ष का विषय है कि हमारे बाहुबली नगर, ललितपुर वासियां के पुण्योदय से पहली बार सन्त शिरोमणी आचार्य प्रवर श्री विद्यासागर जी महाराज से दीक्षित आध्यात्म योगी आचार्य गुरुवरश्री आर्जवसागर जी महाराज की आज्ञानुवर्ती एवं सुयोग्य शिष्या आर्यिकारत्न श्री 105 प्रतिभा मति माताजी एवं आर्यिकाश्री 105 सुयोगमति माताजी के वर्षायोग सान्निध्य का लाभ प्राप्त हो रहा है। जिसमें प्रतिदिन प्रातःकाल प्रवचन दोपहर, में द्रव्य संग्रह, छहढाला आदि कक्षायें एवं शाम को कल्याणमन्दिर, जिनसहस्रनाम स्तोत्र आदि अनेक स्तोत्र पाठों का अर्थ सहित सुबोध, सरल भाषा रूप, अमृत वाणी में समझने का अनूठा अवसर प्राप्त हो रहा है।

26/07/2020 को मोक्ष सप्तमी के दिन श्री 1008 पार्श्वनाथ भगवान का मोक्षकल्याणक भक्तिमय

अभिषेक पूजन के साथ निर्वाण लाडू चढ़ाकर मनाया गया और कई माता–बहिनों ने मोक्ष सप्तमी का व्रत लेकर निर्जल उपवास करने की साधना बढ़ाई। तदुपरान्त 03/08/2020 को रक्षाबन्धन पर्व के दिन श्री श्रेयांसनाथ भगवान के मोक्षकल्याणक पर लाडू चढ़ाकर एवं श्री अकम्पनाचार्य आदि 700 मुनियों की और श्री विष्णुकुमार मुनि की हर्षोल्लास के साथ पूजन की गयी। तत्पश्चात् रक्षाबन्धन पर्व की महिमा बताते हुए आर्यिका माताजी की दिव्यदेशना हम सबको प्राप्त हुई एवं बाहुबली नगर पाठशाला की बहिनों ने अ.क्षे.पार्श्वनाथ जिनालय क्षेत्रपाल में विराजमान गुरुवर आचार्यश्री 108 आर्जवसागरजी महाराज को आर्यिकाओं के लिए बाहुबली नगर मन्दिर जी में सुन्दर राखी भेंट कर रक्षाबन्धन पर्व मनाया।

04/08/2020 तारीख से आर्यिका माताजी के द्वारा सोलहकारण महापर्व पर षोडश भावनाओं से वर्णित तीर्थोदय महाकाव्य पर प्रवचन प्रारम्भ हुआ। सोलहकारण महापर्व में आर्यिका श्री सुयोगमति माताजी ने एक आहार एवं एक उपवास रूप तपस्या की।

तत्पश्चात् 23/08/2020 से पर्वराज दशलक्षण महापर्व का प्रारम्भ हुआ जिसमें प्रतिदिन प्रातः अभिषेक पूजन के पश्चात् आर्यिका माताजी के प्रवचन हर एक धर्म पर सम्पन्न हुए तथा दोपहर में तत्त्वार्थ सूत्र जैसे महान ग्रंथ जी का वाचन एवं आर्यिका माताजी के द्वारा तत्त्वार्थसूत्र जी का एक अध्याय का अर्थ सहित मार्मिक विश्लेषण सुनने का अवसर प्राप्त हुआ और संध्या बेला में महापर्वराज पर पद्य काव्य, प्रतिक्रमण, जाप, ध्यान, पाठ, आरती एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम आदि सम्पन्न हुए। उत्तम शौच धर्म के दिन पूज्य गुरुवर आचार्यश्री 108 आर्जवसागरजी महाराज के 53 वाँ अवतरण दिवस पर माताजी के मुखारबिन्द से भक्ति भाव के साथ पूजन की गयी।

तदोपरान्त अनन्त चतुदर्शी के दिन दोपहर में ध्वजारोहण और वार्षिक अभिषेक हुआ और आर्यिका माताजी के मंगल प्रवचन के माध्यम से सबका नियम, व्रत संकल्प लेकर सच्चा जन्म हुआ। दिनांक 03/09/2020 को क्षमावाणी पर्व मनाया गया जिसमें प्रातः पूज्य प्रतिभामति माताजी की दिव्यदेशना क्षमावाणी पर्व पर हुयी और आपस में सबसे क्षमा याचना कराते और स्वयं भी क्षमा याचना की और दोपहर में आर्यिका संघ के साथ श्रावकगण भ.पार्श्वनाथ अ.क्षे. क्षेत्रपाल पहुँच गए। वन्दनीय आर्यिकाद्वय ने आचार्य गुरुवर जी से क्षमा याचना करते हुए और सभी महाराजों से भी क्षमा याचना करते हुए क्षमावाणी पर्व मनाया।

इसके उपरान्त क्षमावाणी पर्व के दिन दशलक्षण पर्व में व्रत, उपवास करने वालों का सम्मान हुआ। और अभी तीर्थोदय काव्य पर आर्यिका माताजी द्वारा प्रवचन सुनने का सौभाग्य प्राप्त हो रहा है। इस तरह हम सभी को वन्दनीय आर्यिका द्वय के असीम कृपा दृष्टि से इस कोरोना महामारी संकटकाल के बीच में आर्यिका माताजी की अमृतवाणी सुनने का धर्म लाभ मिल रहा है और आगे भी मिलता रहेगा। आगे भी आचार्य ससंघ का भी धर्म लाभ मिले। इसी मंगलमय भावना के साथ आचार्यश्री के पावन चरणों में बारम्बार नमोस्तु, नमोस्तु गुरुवर .... आर्यिका संघ के चरणों में वंदामि, वंदामि, माता जी.......... करते हुए पाठशाला परिवार, एवं मंदिर कमेटी बाहुबली नगर, ललितपुर।

प्रेषकः प्रबंधकगण बाहुबली नगर, ललितपुर (उ.प्र)

सम्यग्ज्ञान-भूषण तथा सिद्धांत-भूषण पदवी हेतु आवेदन-पत्र

मैं .... मधु (शहद), मांस, मद्य (नशा) का त्यागी, धर्म का अनुसरण करने वाला पिता/पति श्री .... जिला ....से भाव विज्ञान पत्रिका की सदस्यता प्राप्त है ☐ नहीं है ☐ सम्यग्ज्ञान-भूषण हेतु 400/- रुपये ☐ तथा सिद्धांत-भूषण हेतु 400/- रुपये ☐ प्रस्तुत है। मेरा पता :- ....जिला .... प्रदेश .... पिनकोड .... एस.टी.डी. कोड ....फोन नम्बर/ मोबाईल ....ई-मेल .... है।

दिनांक : हस्ताक्षर

कार्यालयीन उपयोग हेतु

श्री/श्रीमति .... पिता श्री .... को सम्यग्ज्ञान-भूषण एवं सिद्धांत-भूषण हेतु पंजीकृत किया जाता है।

दिनांक हस्ता. सम्पादक/प्रबन्ध सम्पादक

भाव विज्ञान पत्रिका की सदस्यता हेतु आवेदन-पत्र

मैं .... मधु (शहद), मांस, मद्य (नशा) का त्यागी, धर्म का अनुसरण करने वाला

पिता/पति श्री ....निवासी.. से **भाव विज्ञान पत्रिका** शिरोमणी संरक्षक सदस्य रुपये 50,000/- से अधिक ☐ पुर्ण्याजक विशेषांक संरक्षक सदस्य रूपये 24500/- ☐ परम संरक्षक सदस्य रुपये 21000/- ☐ पुण्यार्जक संरक्षक सदस्य रुपये 18,000/- ☐ सम्मानीय संरक्षक सदस्य रुपये 11,000/- ☐ संरक्षक सदस्य रुपये 5,100/- ☐ विशेष सदस्य रुपये 3,100/- ☐ आजीवन (स्थायी) सदस्यता रुपये 1,500/- ☐ राशि देकर आजीवन सदस्यता स्वीकार करता/ करती हूँ।

मेरा पता :- ....

जिला .... प्रदेश ....पिनकोड .... एस.टी.डी. कोड ....

फोन नम्बर/ मोबाईल .... ई-मेल .... है।

दिनांक हस्ताक्षर

कार्यालयीन उपयोग हेतु

श्री/श्रीमति .... पिता श्री .... को शिरोमणी संरक्षक/पुण्यार्जक विशेषांक संरक्षक/परम संरक्षक/पुण्यार्जक संरक्षक/सम्मानीय संरक्षक/संरक्षक/विशेष सदस्य/आजीवन सदस्यता क्रमांक ....प्रदान की जाती है।

दिनांक हस्ता. सम्पादक/प्रबन्ध सम्पादक

नोट:- ''भाव विज्ञान'' भोपाल के पक्ष में (ड्राफ्ट अथवा) स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, टी.टी. नगर, भोपाल में नेट/कोर बैंकिंग सुविधा के अंतर्गत सेविंग बैंक एकाउंट नंबर-63016576171 एवं IFS Code SBIN0030005 में नगद राशि सीधे जमा कर व रसीद प्राप्त कर प्रकाशक को रसीद की छायाप्रति प्रेषित कर सदस्यता शुल्क की रसीद प्राप्त की जा सकती है।

सदस्यता आवेदन पत्र भेजन का पता

''भाव विज्ञान'' एम-8/4, गीतांजली काम्पलैक्स, कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल-462003 (म.प्र.) को प्रषित करें।

सम्पर्क : प्रधान सम्पादक-डॉ. अजित कुमार जैन - 7222963457, प्रबंध सम्पादक-डॉ. सुधीर जैन - 9425011357

भाव विज्ञान परिवार

❄❄❄❄❄ शिरोमणी संरक्षक ❄❄❄❄❄

मेसर्स आर.के. ग्रुप, मदनगंज-किशनगढ़, अजमेर ● श्री जैन निर्मल कुमार झांझरी, डीमापुर (नागालैंड) ● श्रीमती जैन नीतिका इंजीनियर हर्ष कोछल्ल, हैदराबाद ● डॉ. जैन संकेत शैलेष मेहता, सूरत ● श्री जैन श्रेणिक श्रेयस बीएल पचन्ना बैंग्लोर ● श्री प्रवीण जैन महावीर रोडलाइन्स, दमोह ● श्रीमती रजनी इंजीनियर महेन्द्र जैन ● श्रीमती अनिता डॉ. (प्रो.) सुधीर जैन ● श्रीमती नीलम राजेन्द्र जैन (एक्साइज़), भोपाल ● श्री जैन अतुल, विपुल, कल्पेश रमेशचंद मेहता, अहमदाबाद ● श्री जैन चंदूलाल राजकुमार काला, कोपरगांव ● श्री जैन संजय मित्तल, रामगंज मण्डी (कोटा) ● श्रीमती जैन विद्यादेवी (वैशाली बेन) अश्विन परिख मनन-सलोनी, सूरत।

❄❄❄❄ परम संरक्षक ❄❄❄❄

● श्री जैन गौतम काला, राँची ● श्री बुधराज जैन कासलीवाल, पांडीचेरी, ● श्री प्रेमचंद जैन कुबेर, भोपाल ● **कटनी:** श्री पवन कुमार पंकज कुमार जैन।

❄❄❄ पुण्यार्जक विशेषांक संरक्षक ❄❄❄

● प्रबंधकारिणी समिति, श्री १००८ पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन मंदिर, कीर्तिनगर, जयपुर ● सकल दिगम्बर जैन समाज, दाँतारामगढ़, जिला सीकर ● श्री कुन्थीलाल रमेशचंद नरेश कुमार जैन गदिया, नसीराबाद (अजमेर) ● **रामगंजमण्डी :** सकल दिगम्बर जैन समाज एवं वर्षायोग समिति 2011, श्री जैन ताराचंद मित्तल परिवार एवं महेशकुमार अशोक कुमार महेन्द्र कुमार जैन ठोरा।

❄❄ पुण्यार्जक संरक्षक ❄❄

● श्री जैन नीरज सुपुत्र श्रीमती चन्द्रकला पाटनी, रांची ● सुशील कुमार, अभिषेक रोहित कुमार जैन, पांडीचेरी ● श्री मिट्ठनलाल जैन, नई दिल्ली।

❄ सम्मानीय संरक्षक ❄

● श्री वर्धमान विक्रमादित्य जैन, गोवा ● श्री जैन पदमराज होळल, दावणगेरे ● श्री जैन सोहनलाल कासलीवाल, सेलम ● श्री जैन संजय सोगानी, राँची ● श्री जैन आकाश टोंग्या, डॉ. जयदीप जैन मोनू, भोपाल ● श्री महावीरप्रसाद संजयकुमार जैन, इस्पात एंटरप्राईजेस प्रा.लि., कलकत्ता ● श्रीमती जैन संगीता हरीश बजाज, टीकमगढ़ ● श्रीमती कमलाबाई अशोक जैन साहबजाज, अजमेर ● श्री घनश्याम जैन, कृष्णा नगर, दिल्ली ● **जयपुर :** श्री जैन कमलजी काला, कु. इन्द्रसेना जैन ● **सूरत :** श्री नरेश जैन, (दिल्ली वाले), श्री जैन निलेशभाई शाह। ● **पथरिया (दमोह) :** श्रीमती जैन उषा पदम मलैया ● **गुड़गांव :** श्री हिमांशु कैलाशचंद जैन।

❄ संरक्षक ❄

● **रीवा:** श्री जैन विजय अजमेरा, डॉ. अश्विनी जैन ● **छतरपुर:** श्री के. सी. जैन, डि. एक्साइज अधिकारी ● श्री अजित प्रसाद जैन सराफ, रेवाड़ी ● **दिल्ली :** श्री विजयपाल जैन, शाहदरा, श्री राकेश जैन, रोहिणी ● **हस्तिनापुर (मेरठ):** श्री दिगम्बर जैन तीर्थ बड़ा मंदिर ● **गुड़गांव:** श्री संजय जैन ● **गाजियाबाद :** श्रीमती सुषमा रवीन्द्र कुमार जैन ● **कलकत्ता:** श्री जैन कल्याणमल झांझरी ● **भोपाल:** श्रीमती सुधा महेन्द्र कुमार जैन, ● **कोटा:** श्री कस्तूरचंद सुरेश कुमार जैन, रामगंजमण्डी ● **गुवाहाटी:** श्रीमती जैन हीरामणी चांदमल सेठी ● **पांडीचेरी :** श्री जैन विमलचंद मोहित कुमार ठोलिया ● **सूरत :** श्रीमति विमला मनोहर जैन, श्री निर्मल जैन ● **जयपुर :** श्री एस.एल. जैन (बागड़िया), श्री जैन गुणसागर ठोलिया-किशनगढ़-रेनवाल, श्री जैन श्रेयांस कुमार पाटोदी, श्रीमती जैन अनिता पारस सौगानी, श्री जैन जितेन्द्र अजमेरा, श्री जैन ओम कासलीवाल, श्री जैन मंगलचंद हरकचंद मोतीलाल कमलचंद छाबड़ा, श्री विजय कुमार जैन छाबड़ा ● **उदयपुर:** श्री प्रकाशचंद जैन, श्रीमती निधी राहुल जैन-अनुपम ग्रुप ऑफ कम्पनीज, श्री जैन अशोक कुमार ड्वारा ● **इंदौर :** श्री सचिन जैन, स्मृति नगर ● **पथरिया (दमोह) :** श्री मुकेशकुमार जैन (संजय साईकिल) ● **ललितपुर :** श्री अनिल जैन 'अंचल'

❄ विशेष सदस्य ❄

● **दमोह :** श्री मनोज जैन दाल मिल ● **अजमेर :** श्री भागचन्द जैन, नसीराबाद ● **सूरत :** श्री जैन हर्षद भाई मेहता, श्री जैन अरविंद भाई गांधी, श्री जैन संयम संदीप भाई शाह, श्री जैन रमेश मोहनलाल दौसी, श्री जैन कोठारी बाबूलाल कचरालाल, श्री जैन कन्हैयालाल कचरालाल मेहता, श्री जैन कमलेश शाह, श्री जैन हसमुख मगनलाल शाह, श्री जैन चम्पालाल लक्ष्मीलाल सिंघवी, श्री जैन नीलकेष बालू शाह मढ़ी, श्रीमती जैन सुनिता विद्या प्रकाश दीवान, श्री जैन अशोक कुमार गंगवाल खाच्छरियावास, श्रीमती जैन गुणमाला देवी दीपचंद सेठी ● **भोपाल:** श्री राजकुमार जैन, बिजली नगर ● **कटनी :** श्री शुभमकुमार सुभाषचंद जैन, ● **पन्ना :** श्री महेन्द्र जैन, पवई।

❄ नवागत सदस्य ❄

● **ललितपुर :** श्रीमती प्रमोद विपिन जैन (कबाड़ी), श्रीमती अनीता जितेन्द्र जैन, श्रीप्रकाशचंद जैन, इंजीनियर नेमीचंद जैन, श्रीमती पिंकी अनुज कुमार जैन, श्रीमती रचना नीरज जैन, श्रीमती रंजना प्रदीप जैन, एडवोकेट जैन महेन्द्रकुमार विवेक मड़वैया, श्री अशोक जैन बैंकवाले, श्री विकल्प वीरेन्द्र जैन, श्री संजीवकुमार जैन (ममता स्पोर्ट्स), श्रीमती चंद्रकांता शीलचंद जैन, श्री पंडित पवनकुमार जैन, श्री राजीवकुमार जैन, श्री जैन संजीवकुमार चौधरी, श्रीमती मीना अरुणकुमार जैन (इमलिया), श्री मदनलाल चित्रा जैन "काका बस", श्री कैलाश जैन, डॉ. जैन अक्षय टड़ैया।

द्वितीय मुनिदीक्षा दिवस पर उद्‌बोधन देते हुए मुनिश्री विलोकसागरजी महाराज।

द्वितीय मुनिदीक्षा दिवस पर उद्‌बोधन देते हुए मुनिश्री विबोधसागरजी महाराज।

द्वितीय मुनिदीक्षा दिवस पर उद्‌बोधन देते हुए मुनिश्री विदितसागरजी महाराज।

आचार्यश्री आर्जवसागरजी का आशीष लेते हुए पद्मश्री कैलाश मड़वैया, भोपाल

पद्मश्री कैलाश मड़वैया की कृति बुंदेली भक्तामर का विमोचन करते हुए भक्तगण।

शांति विधान में प्रवचन से पूर्व दीप प्रज्वलन करती हुई ललितपुर नगर की व्रती बहिनें।

आचार्यश्री आर्जवसागरजी के पावन सान्निध्य में दस प्रतिमाधारी विरतमति श्राविका को सम्बोधन का दृश्य।

तीर्थ रक्षक सुभाष जैन (दाऊ) ग्वालियर का सम्मान करते हुए पंचायत अध्यक्ष अनिल जैन ' अंचल ', ललितपुर।

रजि. क्रं. MPHIN/2007/27127

प्रति

2020 ललितपुर में शास्त्र भेंट करते हुए भक्तगण।

नवीन रचित कविताओं का पाठ करते हुए आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज।

आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज की नवधा भक्ति करते हुए भक्तगण।

कायोत्सर्ग में लीन आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज।

आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज की चरण वंदना करते हुए संघस्थ मुनिगण।

स्वामी एवं प्रकाशक : श्रीमती सुषमा जैन द्वारा मुद्रक : पवन कुमार जैन मो.:9826240876 द्वारा पारस प्रिन्टर्स, 207/4, सांईबाबा काम्पलेक्स, जोन-1, एम.पी. नगर, भोपाल से मुद्रित एवं एमआईजी-8/4, गीतांजली काम्पलेक्स, कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल (म.प्र.) से प्रकाशित।
सम्पादक - डॉ. अजित कुमार जैन, MIG-8/4, गीतांजली काम्प्लैक्स, कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल-462003 फोन : 7222963457, 9425601161